

अध्याय 5

लेडी मेट'न ने आकर कहा—सुखदादेवी, तुम्हारे ससुर तुमसे मिलने आए हैं। तैयार हो जाओ साहब ने बीस मिनट का समय दिया है।

सुखदा ने चटपट मुन्ने का मुंह धोया, नए कपड़े पहनाए, जो कई दिन पहले जेल में सिले थे, और उसे गोद में लिए मेट'न के साथ बाहर निकली, मानो पहले ही से तैयार बैठी हो।

मुलाकात का कमरा जेल के मध्य में था और रास्ता बाहर ही से था। एक महीने के बाद जेल से बाहर निकलकर सुखदा को ऐसा उल्लास हो रहा था, मानो कोई रोगी शय्या से उठा हो। जी चाहता था, सामने के मैदान में खूब उछले और मुन्ना तो चिड़ियों के पीछे दौड़ रहा था।

लाला समरकान्त वहां पहले ही से बैठे हुए थे। मुन्ने को देखते ही गद्गद हो गए और गोद में उठाकर बार-बार उसका मुंह चूमने लगे। उसके लिए मिठाई, खिलौने, फल, कपड़ा, पूरा एक गड्ढर लाए थे। सुखदा भी श्रद्धा और भक्ति से पुलकित हो उठी उनके चरणों पर गिर पड़ी और रोने लगी इसलिए नहीं कि उस पर कोई विपत्ति पड़ी है, बल्कि रोने में ही आनंद आ रहा है।

समरकान्त ने आशीर्वाद देते हुए पूछा-यहां तुम्हें जिस बात का कष्ट हो, मेट'न साहब से कहना। मुझ पर इनकी बड़ी कृपा है। मुन्ना अब शाम को रोज बाहर खेला करेगा और किसी बात की तकलीफ तो नहीं है-

सुखदा ने देखा, समरकान्त दुबले हो गए हैं। स्नेह से उसका हृदय जैसे झलक उठा। बोली-मैं तो यहां बड़े आराम से हूं पर आप क्यों इतने दुबले हो गए हैं-

'यह न पूछो, यह पूछो कि आप जीते कैसे हैं- नैना भी चली गई, अब घर भूतों का डेरा हो गया है। सुनता हूं लाला मनीराम अपने पिता से अलग होकर दूसरा विवाह करने जा रहे हैं। तुम्हारी माताजी तीर्थ-यात्रा करने चली गईं। शहर में आंदोलन चलाया जा रहा है। उस जमीन पर दिन-भर जनता की भीड़ लगी रहती है। कुछ लोग रात को वहां सोते हैं। एक दिन तो रातो-रात वहां सैंकड़ों झोंपड़े खड़े हो गए लेकिन दूसरे दिन पुलिस ने उन्हें जला दिया और कई चौधरियों को पकड़ लिया।'

सुखदा ने मन-ही-मन हर्षित होकर पूछा-यह लोगों ने क्या नादानी की वहां अब कोठियां बनने लगी होंगी-

समरकान्त बोले-हां ईंटें, चूना, सुर्खी तो जमा की गई थी लेकिन एक दिन रातों-रात सारा सामान उड़ गया। ईंटें बखेर दी गईं, चूना मिट्टी में मिला दिया गया। तब से वहां किसी को मजूर ही नहीं मिलते। न कोई बेलदार जाता है, न कारीगर। रात को पुलिस का पहरा रहता है। वही बुढ़िया पठानिन आजकल वहां सब कुछ कर-धार रही है। ऐसा संगठन कर लिया है कि आश्चर्य होता है।

जिस काम में वह असफल हुई, उसे वह खप्पट बुढ़िया सुचाई रूप से चला रही है इस विचार से उसके आत्माभिमान को चोट लगी। बोली-वह बुढ़िया तो चल-फिर भी न पाती थी।

'हां, वही बुढ़िया अच्छे-अच्छों के दांत खट्टे कर रही है। जनता को तो उसने ऐसे मुट्ठी में कर लिया है कि क्या कहीं भीतर बैठे हुए कल घुमाने वाले शान्ति बाबू हैं।'

सुखदा ने आज तक उनसे या किसी से, अमरकान्त के विषय में कुछ न पूछा था पर इस वक्त वह मन को न रोक सकी-हरिद्वार से कोई पत्र आया था-

लाला समरकान्त की मुद्रा कठोर हो गई। बोले-हां, आया था। उसी शोहदे सलीम का खत था। वही उस इलाके का हाकिम है। उसने भी पकड़-धकड़ शुरू कर दी है। उसने खुद लालाजी को गिरफ्तार किया। यह आपके मित्रों का हाल है। अब आंखें खुली होंगी। मेरा क्या बिगड़ा- अब ठोकरें खा रहे हैं। अब जेल में चक्की पीस रहे होंगे। गए थे गरीबों की सेवा करने। यह उसी का उपहार है। मैं तो ऐसे मित्र को गोली मार देता। गिरफ्तार तक हुए पर मुझे पत्र न लिखा। उसके हिसाब से तो मैं मर गया मगर बुढ़्ढा अभी मरने का नाम नहीं लेता, चैन से खाता है और सोता है। किसी के मनाने से नहीं मरा जाता। जरा यह मुठमरदी देखो कि घर में किसी को खबर तक न दी। मैं दुश्मन था, नैना तो दुश्मन न थी, शान्तिकुमार तो दुश्मन न थे। यहां से कोई जाकर मुकदमे की पैरवी करता, तो ए, बी. का दर्जा तो मिल जाता। नहीं, मामूली कैदियों की तरह पड़े हुए हैं आप रोएंगे, मेरा क्या बिगड़ता है।

सुखदा कातर कंठ से बोली-आप अब क्यों नहीं चले जाते-

समरकान्त ने नाक सिकोड़कर कहा-मैं क्यों जाऊं, अपने कर्मों का फल भोगे। वह लड़की जो थी, सकीना, उसकी शादी की बातचीत उसी दुष्ट सलीम से हो रही है, जिसने लालाजी को गिरफ्तार किया है। अब आंखें खुली होंगी।

सुखदा ने सहृदयता से भरे हुए स्वर में कहा-आप तो उन्हें कोस रहे हैं, दादा वास्तव में दोष उनका न था। सरासर मेरा अपराध था। उनका-सा तपस्वी पुरुष मुझ-जैसी विलासिनी के साथ कैसे प्रसन्न रह सकता था बल्कि यों कहो कि दोष न मेरा था, न आपका, न उनका, सारा विष लक्ष्मी ने बोया। आपके घर में उनके लिए स्थान न था। आप उनसे बराबर खिंचे रहते थे। मैं भी उसी जलवायु में पली थी। उन्हें न पहचान सकी। वह अच्छा या बुरा जो कुछ करते थे, घर में उसका विरोध होता था। बात-बात पर उनका अपमान किया जाता था। ऐसी दशा में कोई भी संतुष्ट न रह सकता था। मैंने यहां एकांत में इस प्रश्न पर खूब विचार किया है और मुझे अपना दोष स्वीकार करने में लेशमात्र भी संकोच नहीं है। आप एक क्षण भी यहां न ठहरें। वहां जाकर अधिकारियों से मिलें, सलीम से मिलें और उनके लिए जो कुछ हो सके, करें। हमने उनकी विशाल तपस्वी आत्मा को भोग के बंधनो से बंधकर रखना चाहा था। आकाश में उड़ने वाले पक्षी को पिंजड़े में बंद करना चाहते थे। जब पक्षी पिंजड़े को तोड़कर उड़ गया, तो मैंने समझा, मैं अभागिनी हूं। आज मुझे मालूम हो रहा है, वह मेरा परम सौभाग्य था।

समरकान्त एक क्षण तक चकित नेत्रों से सुखदा की ओर ताकते रहे, मानो अपने कानों पर विश्वास न आ रहा हो। इस शीतल क्षमा ने जैसे उनके मुरझाए हुए पुत्र-स्नेह को हरा कर दिया। बोले-इसकी तो मैंने खूब जांच की, बात कुछ नहीं थी। उस पर क्रोध था, उसी क्रोध में जो कुछ मुंह में आ गया, बक गया। यह ऐब उसमें कभी न था लेकिन उस वक्त मैं भी अंधा हो रहा था। फिर मैं कहता हूं, मिथ्या नहीं, सत्य ही सही, सोलहों आने सत्य सही, तो क्या संसार में जितने ऐसे मनुष्य हैं, उनकी गरदन काट दी जाती है- मैं बड़े-बड़े व्यभिचारियों के सामने मस्तक नवाता हूं। तो फिर अपने ही घर में और उन्हीं के ऊपर जिनसे किसी प्रतिकार की शंका नहीं, धर्म और सदाचार का सारा भार लाद दिया जाय- मनुष्य पर जब प्रेम का बंधन नहीं होता तभी वह व्यभिचार करने लगता है। भिक्षुक द्वार-द्वार इसीलिए जाता है कि एक द्वार से उसकी क्षुधा-तृप्ति नहीं होती। अगर इसे दोष भी मान लूं, तो ईश्वर ने क्यों निर्दोष संसार नहीं बनाया- जो कहो कि ईश्वर की इच्छा ऐसी नहीं है, तो मैं पूछूंगा, जब सब ईश्वर के अधीन है, तो वह मन को ऐसा क्यों बना देता है कि उसे किसी टूटी झोंपड़ी की भांति बहुत-सी थूनीयों से संभलना पड़े। यहां तो ऐसा ही है जैसे किसी

रोगी से कहा जाय कि तू अच्छा हो जा। अगर रोगी में सामर्थ्य होती, तो वह बीमार ही क्यों पड़ता-

एक ही सांस में अपने हृदय का सारा मालिन्य उंडेल देने के बाद लालाजी दम लेने के लिए रुक गए। जो कुछ इधर-उधर लगा-चिपटा रह गया हो, शायद उसे भी खुरचकर निकाल देने का प्रयत्न कर रहे थे।

सुखदा ने पूछा-तो आप वहां कब जा रहे हैं-

लालाजी ने तत्परता से कहा-आज ही, इधर ही से चला जाऊंगा। सुना है, वहां जोरों से दमन हो रहा है। अब तो वहां का हाल समाचार-पत्रों में भी छपने लगा। कई दिन हुए, मुन्नी नाम की कोई स्त्री भी कई आदमियों के साथ गिरफ्तार हुई है। कुछ इसी तरह की हलचल सारे प्रांत, बल्कि सारे देश में मची हुई है। सभी जगह पकड़-धकड़ हो रही है।

बालक कमरे के बाहर निकल गया था। लालाजी ने उसे पुकारा, तो वह सड़क की ओर भागा। समरकान्त भी उसके पीछे दौड़े। बालक ने समझा, खेल हो रहा है। और तेज दौड़ा। ढाई-तीन साल के बालक की तेजी ही क्या, किन्तु समरकान्त जैसे स्थूल आदमी के लिए पूरी कसरत थी। बड़ी मुश्किल से उसे पकड़ा।

एक मिनट के बाद कुछ इस भाव से बोले, जैसे कोई सारगर्भित कथन हो-मैं तो सोचता हूं, जो लोग जाति-हित के लिए अपनी जान होम करने को हरदम तैयार रहते हैं, उनकी बुराइयों पर निगाह ही न डालनी चाहिए।

सुखदा ने विरोध किया-यह न कहिए, दादा ऐसे मनुष्यों का चरित्र आदर्श होना चाहिए नहीं तो उनके परोपकार में भी स्वार्थ और वासना की गंध आने लगेगी।

समरकान्त ने तत्वज्ञान की बात कही-स्वार्थ मैं उसी को कहता हूं, जिसके मिलने से चित्त को हर्ष और न मिलने से क्षोभ हो। ऐसा प्राणी, जिसे हर्ष और क्षोभ हो ही नहीं, मनुष्य नहीं, देवता भी नहीं, जड़ है।

सुखदा मुस्कराई-तो संसार में कोई निस्वार्थ हो ही नहीं सकता-

'असंभव स्वार्थ छोटा हो, तो स्वार्थ है बड़ा हो, तो उपकार है। मेरा तो विचार है, ईश्वर-भक्ति भी स्वार्थ है।'

मुलाकात का समय कब का गुजर चुका था। मेट'न अब और रियायत न कर सकती थी। समरकान्त ने बालक को प्यार किया, बहू को आशीर्वाद दिया और बाहर निकले।

बहुत दिनों के बाद आज उन्हें अपने भीतर आनंद और प्रकाश का अनुभव हुआ, मानो चन्द्रदेव के मुख से मेघों का आवरण हट गया हो।

दो

सुखदा अपने कमरे में पहुंची, तो देखा-एक युवती कैदियों के कपड़े पहने उसके कमरे की सफाई कर रही है। एक चौकीदारिन बीच-बीच में उसे डांटती जाती है।

चौकीदारिन ने कैदिन की पीठ पर लात मारकर कहा-रांड, तुझे झाड़ू लगाना भी नहीं आता गर्द क्यों उड़ाती है- हाथ दबाकर लगा।

कैदिन ने झाड़ू फेंक दी और तमतमाते हुए मुख से बोली-मैं यहां किसी की टहल करने नहीं आई हूं।

'तब क्या रानी बनकर आई है?'

'हां, रानी बनकर आई हूं। किसी की चाकरी करना मेरा काम नहीं है।'

'तू झाड़ू लगाएगी कि नहीं?'

'भलमनसी से कहो, तो मैं तुम्हारे भंगी के घर में भी झाड़ू लगा दूंगी लेकिन मार का भय दिखाकर तुम मुझसे राजा के घर में भी झाड़ू नहीं लगवा सकतीं। इतना समझ रखो।'

'तू न लगाएगी झाड़ू?'

'नहीं।'

चौकीदारिन ने कैदिन के केश पकड़ लिए और खींचती हुई कमरे के बाहर ले चली। रह-रहकर गालों पर तमाचे भी लगाती जाती थी।

'चल जेलर साहब के पास।'

'हां, ले चलो। मैं यही उनसे भी कहूंगी। मार-गाली खाने नहीं आई हूं।'

सुखदा के लगातार लिखा-पढ़ी करने पर यह टहलनी दी गई थी पर यह कांड देखकर सुखदा का मन क्षुब्ध हो उठा। इस कमरे में कदम रखना भी उसे बुरा लग रहा था।

कैदिन ने उसकी ओर सजल आंखों से देखकर कहा-तुम गवाह रहना। इस चौकीदारिन ने मुझे कितना मारा है।

सुखदा ने समीप जाकर चौकीदारिन को हटाया और कैदिन का हाथ पकड़कर कमरे में ले गई।

चौकीदारिन ने धमकाकर कहा-रोज सबेरे यहां आ जाया कर। जो काम यह कहें, वह किया कर। नहीं डंडे पड़ेंगे।

कैदिन क्रोध से कांप रही थी-मैं किसी की लौंडी नहीं हूं और न यह काम करूंगी। किसी रानी-महारानी की टहल करने नहीं आई। जेल में सब बराबर हैं।

सुखदा ने देखा, युवती में आत्म-सम्मान की कमी नहीं। लज्जित होकर बोली-यहां कोई रानी-महारानी नहीं है बहन, मेरा जी अकेले घबराया करता था, इसलिए तुम्हें बुला लिया। हम दोनों यहां बहनों की तरह रहेंगी। क्या नाम है तुम्हारा-

युवती की कठोर मुद्रा नर्म पड़ गई। बोली-मेरा नाम मुन्नी है। हरिद्वार से आई हूं।

सुखदा चौंक पड़ी। लाला समरकान्त ने यही नाम तो लिया था। पूछा-वहां किस अपराध में सजा हुई-

'अपराध क्या था- सरकार जमीन का लगान नहीं कम करती थी। चार आने की छूट हुई। जिस का दाम आधा भी नहीं उतरा। हम किसके घर से ला के देते- इस बात पर हमने फरियाद की। बस, सरकार ने सजा देना शुरू कर दिया।'

मुन्नी को सुखदा अदालत में कई बार देख चुकी थी। तब से उसकी सूरत बहुत कुछ बदल गई थी। पूछा-तुम बाबू अमरकान्त को जानती हो- वह भी इसी मुआमले में गिरफ्तार हुए हैं-

मुन्नी प्रसन्न हो गई-जानती क्यों नहीं, वह तो मेरे ही घर में रहते थे। तुम उन्हें कैसे जानती हो- वही तो हमारे अगुआ हैं।

सुखदा ने कहा-मैं भी काशी की रहने वाली हूं। उसी मुहल्ले में उनका भी घर है। तुम क्या ब्राह्मणी हो-

'हूँ तो ठकुरानी, पर अब कुछ नहीं हूँ। जात-पांत, पूत-भतार सबको खो बैठी।'

'अमर बाबू कभी अपने घर की बातचीत नहीं करते थे?'

'कभी नहीं। न कभी आना न जाना न चिट्ठी, न पत्तार।'

सुखदा ने कनखियों से देखकर कहा-मगर वह तो बड़े रसिक आदमी हैं। वहां गांव में किसी पर डोरे नहीं डाले-

मुन्नी ने जीभ दांतों तले दबाई-कभी नहीं बहूजी, कभी नहीं। मैंने तो उन्हें कभी किसी मेहरिया की ओर ताकते या हंसते नहीं देखा। न जाने किस बात पर घरवाली से रूठ गए। तुम तो जानती होगी-

सुखदा ने मुस्कराते हुए कहा-रूठ क्या गए, स्त्री को छोड़ दिया। छिपकर घर से भाग गए। बेचारी औरत घर में बैठी हुई है। तुमको मालूम न होगा उन्होंने जरूर कहीं-न-कहीं दिल लगाया होगा।

मुन्नी ने दाहिने हाथ को सांप के फन की भांति हिलाते हुए कहा-ऐसी बात होती, तो गांव में छिपी न रहती, बहूजी मैं तो रोज ही दो-चार बार उनके पास जाती थी। कभी सिर ऊपर न उठाते थे। फिर उस देहात में ऐसी थी ही कौन, जिस पर उनका मन चलता। न कोई पढ़ी-लिखी, न गुन, न सहूर।

सुखदा ने नब्ब टटोली-मर्द गुन-सहूर, पढ़ना-लिखना नहीं देखते। वह तो रूप-रंग देखते हैं और वह तुम्हें भगवान् ने दिया ही है। जवान भी हो।

मुन्नी ने मुंह फेरकर कहा-तुम तो गाली देती हो, बहूजी मेरी ओर भला वह क्या देखते, जो उनके पांव की जूतियों के बराबर नहीं लेकिन तुम कौन हो बहूजी, तुम यहां कैसे आई-

'जैसे तुम आई, वैसे ही मैं भी आई।'

'तो यहां भी वही हलचल है?'

'हां, कुछ उसी तरह की है।'

मुन्नी को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि ऐसी विदुषी देवियां भी जेल में भेजी गई हैं। भला इन्हें किस बात का दुःख होगा-

उसने डरते-डरते पूछा-तुम्हारे स्वामी भी सजा पा गए होंगे-

'हां, तभी तो मैं आई।'

मुन्नी ने छत की ओर देखकर आशीर्वाद दिया-भगवान् तुम्हारा मनोरथ पूरा करे, बहूजी गददी-मसनद लगाने वाली रानियां जब तपस्या करने लगीं, तो भगवान् वरदान भी जल्दी ही देंगे। कितने दिन की सजा हुई है- मुझे तो छः महीने की है।

सुखदा ने अपनी सजा की मियाद बताकर कहा-तुम्हारे जिले में बड़ी सख्तियां हो रही होंगी। तुम्हारा क्या विचार है, लोग सख्ती से दब जाएंगे-

मुन्नी ने मानो क्षमा-याचना की-मेरे सामने तो लोग यही कहते थे कि चाहे फांसी पर चढ़ जाएं, पर आधो से बेसी लगान न देंगे लेकिन दिल से सोचो, जब बैल बधिए छीने जाने लगेंगे, सिपाही घरों में घुसेंगे, मरदों पर डंडे और

गोलियों की मार पड़ेगी, तो आदमी कहां तक सहेगा- मुझे पकड़ने के लिए तो पूरी फौज गई थी। पचास आदमियों से कम न होंगे। गोली चलते-चलते बची। हजारों आदमी जमा हो गए। कितना समझाती थी-भाइयो, अपने-अपने घर जाओ, मुझे जाने दो लेकिन कौन सुनता है- आखिर जब मैंने कसम दिलाई, तो लोग लौटे नहीं, उसी दिन दस-पांच की जान जाती। न जाने भगवान् कहां सोए हैं कि इतना अन्याय देखते हैं और नहीं बोलते। साल में छः महीने एक जून खाकर बेचारे दिन काटते हैं, चीथड़े पहनते हैं, लेकिन सरकार को देखो, तो उन्हीं की गरदन पर सवार हाकिमों को तो अपने लिए बंगला चाहिए, मोटर चाहिए, हर नियामत खाने को चाहिए, सैर-तमाशा चाहिए, पर गरीबों का इतना सुख भी नहीं देखा जाता जिसे देखो, गरीबों ही का रक्त चूसने को तैयार है। हम जमा करने को नहीं मांगते, न हमें भोग-विलास की इच्छा है, लेकिन पेट को रोटी और तन ढांकने को कपड़ा तो चाहिए। साल-भर खाने-पहनने को छोड़ दो, गृहस्थी का जो कुछ खर्च पड़े वह दे दो। बाकी जितना बचे, उठा ले जाओ। मुर्दा गरीबों की कौन सुनता है-

सुखदा ने देखा, इस गंवारिन के हृदय में कितनी सहानुभूति, कितनी दया, कितनी जागृति भरी हुई है। अमर के त्याग और सेवा की उसने जिन शब्दों में सराहना की, उसने जैसे सुखदा के अंतःकरण की सारी मलिनताओं को धोकर निर्मल कर दिया, जैसे उसके मन में प्रकाश आ गया हो, और उसकी सारी शंकाएं और चिंताएं अंधकार की भांति मिट गई हों। अमरकान्त का कल्पना-चित्र उसकी आंखों के सामने आ खड़ा हुआ-कैदियों का जांघिया-कंटोप पहने, बड़े-बड़े बाल बढ़ाए, मुख मलिन, कैदियों के बीच में चक्की पीसता हुआ। वह भयभीत होकर कांप उठी। उसका हृदय कभी इतना कोमल न था।

मेट'न ने आकर कहा-अब तो आपको नौकरानी मिल गई। इससे खूब काम लो।

सुखदा धीमे स्वर में बोली-मुझे अब नौकरानी की इच्छा नहीं है मेमसाहब, मैं यहां रहना भी नहीं चाहती। आप मुझे मामूली कैदियों में भेज दीजिए।

मेट'न छोटे कद की ऐंग्लो-इंडियन महिला थी। चौड़ा मुंह, छोटी-छोटी आंखें, तराशे हुए बाल, घुटनों के ऊपर तक का स्कर्ट पहने हुए। विस्मय से बोली-यह क्या कहती हो, सुखदादेवी- नौकरानी मिल गया और जिस चीज का तकलीफ हो हमसे कहो, हम जेलर साहब से कहेगा।

सुखदा ने नम्रता से कहा-आपकी इस कृपा के लिए मैं आपको धन्यवाद देती हूं। मैं अब किसी तरह की रियायत नहीं चाहती। मैं चाहती हूं कि मुझे मामूली कैदियों की तरह रखा जाय।

'नीच औरतों के साथ रहना पड़ेगा। खाना भी वही मिलेगा।'

'यही तो मैं चाहती हूं।'

'काम भी वही करना पड़ेगा। शायद चक्की पीसने का काम दे दें।'

'कोई हरज नहीं।'

'घर के आदमियों से तीसरे महीने मुलाकात हो सकेगी।'

'मालूम है।'

मेट'न की लाला समरकान्त ने खूब पूजा की थी। इस शिकार के हाथ से निकल जाने का दुःख हो रहा था। कुछ देर समझाती रही। जब सुखदा ने अपनी राय न बदली, तो पछताती हुई चली गई।

मुन्नी ने पूछा-मेम साहब क्या कहती थी-

सुखदा ने मुन्नी को स्नेह-भरी आंखों से देखा-अब मैं तुम्हारे ही साथ रहूंगी, मुन्नी।

मुन्नी ने छाती पर हाथ रखकर कहा-यह क्या करती हो, बहू- वहां तुमसे न रहा जाएगा।

सुखदा ने प्रसन्न मुख से कहा-जहां तुम रह सकती हो, वहां मैं भी रह सकती हूं।

एक घंटे के बाद जब सुखदा यहां से मुन्नी के साथ चली, तो उसका मन आशा और भय से कांप रहा था, जैसे कोई बालक परीक्षा में सफल होकर अगली कक्षा में गया हो।

तीन

पुलिस ने उस पहाड़ी इलाके का घेरा डाल रखा था। सिपाही और सवार चौबीसों घंटे घूमते रहते थे। पांच आदमियों से ज्यादा एक जगह जमा न हो सकते थे। शाम को आठ बजे के बाद कोई घर से निकल न सकता था। पुलिस को इत्तिला दिए बगैर घर में मेहमान को ठहराने की भी मनाही थी। फौजी कानून जारी कर दिया गया था। कितने ही घर जला दिए गए थे और उनके रहने वाले हबूडों की भांति वृक्षों के नीचे बाल-बच्चों को लिए पड़े थे। पाठशाला में आग लगा दी गई थी और उसकी आधी-आधी काली दीवारें मानो केश खोले मातम कर रही थीं। स्वामी आत्मानन्द बांस की छतरी लगाए अब भी वहां डटे हुए थे। जरा-सा मौका पाते ही इधर-उधर से दस-बीस आदमी आकर जमा हो जाते पर सवारों को आते देखा और गायब।

सहसा लाला समरकान्त एक गड्ढर पीठ पर लादे मदरसे के सामने आकर खड़े हो गए। स्वामी ने दौड़कर उनका बिस्तर ले लिया और खाट की फिक्र में दौड़े। गांव-भर में बिजली की तरह खबर दौड़ गई-भैया के बाप आए हैं। हैं तो वृद्ध मगर अभी टनमन हैं। सेठ-साहूकार से लगते हैं। एक क्षण में बहुत से आदमियों ने आकर घेर लिया। किसी के सिर में पट्टी बंधी थी, किसी के हाथ में। कई लंगड़ा रहे थे। शाम हो गई और आज कोई विशेष खटका न देखकर और सारे इलाके में डंडे के बल से शांति स्थापित करके पुलिस विश्राम कर रही थी। बेचारे रात-दिन दौड़ते-दौड़ते अधमरे हो गए थे।

गूदड़ ने लाठी टेकते हुए आकर समरकान्त के चरण छुए और बोले-अमर भैया का समाचार तो आपको मिला होगा। आजकल तो पुलिस का धावा है। हाकिम कहता है-बारह आने लेंगे, हम कहते हैं हमारे पास है ही नहीं, दें कहां से-बहुत-से लोग तो गांव छोड़कर भाग गए। जो हैं, उनकी दसा आप देख ही रहे हैं। मुन्नी बहू को पकड़कर जेल में डाल दिया। आप ऐसे समय में आए कि आपकी कुछ खातिर भी नहीं कर सकते।

समरकान्त मदरसे के चबूतरे पर बैठ गए और सिर पर हाथ रखकर सोचने लगे-इन गरीबों की क्या सहायता करें-क्रोध की एक ज्वाला-सी उठकर रोम-रोम में व्याप्त हो गई, पूछा-यहां कोई अफसर भी तो होगा-

गूदड़ ने कहा-हां, अफसर तो एक नहीं, पच्चीस हैं जी। सबसे बड़ा अफसर तो वही मियांजी हैं, जो अमर भैया के दोस्त हैं।

'तुम लोगों ने उस लंगे से पूछा नहीं-मारपीट क्यों करते हो, क्या यह भी कानून है?'

गूदड़ ने सलोनी की मड़ैया की ओर देखकर कहा-भैया, कहते तो सब कुछ हैं, जब कोई सुने सलीम साहब ने खुद अपने हाथों से हंटर मारे। उनकी बेदर्दी देखकर पुलिस वाले भी दांतों तले उंगली दबाते थे। सलोनी मेरी भावज

लगती है। उसने उनके मुंह पर थूक दिया था। यह उसे न करना चाहिए था। पागलपन था और क्या- मियां साहब आग हो गए और बुढ़िया को इतने हंटर जमाए कि भगवान् ही बचाए तो बचे। मुर्दा वह भी है अपनी धुन की पक्की, हरेक हंटर पर गाली देती थी। जब बेदम होकर गिर पड़ी, तब जाकर उसका मुंह बंद हुआ। भैया उसे काकी-काकी करते रहते थे। कहीं से आवें, सबसे पहले काकी के पास जाते थे। उठने लायक होती तो जरूर-से-जरूर आती।

आत्मानन्द ने चिढ़कर कहा-अरे तो अब रहने भी दे, क्या सब आज ही कह डालोगे- पानी मंगवाओ, आप हाथ-मुंह धोएं, जरा आराम करने दो, थके-मांदे आ रहे हैं-वह देखो, सलोनी को भी खबर मिल गई, लाठी टेकती चली आ रही है।

सलोनी ने पास आकर कहा-कहां हो देवरजी, सावन में आते तो तुम्हारे साथ झूला झूलती, चले हो कातिक में जिसका ऐसा सरदार और ऐसा बेटा, उसे किसका डर और किसकी चिंता तुम्हें देखकर सारा दुःख भूल गई, देवरजी।

समरकान्त ने देखा-सलोनी की सारी देह सूज उठी है और साड़ी पर लहू के दाग सूखकर कत्थई हो गए हैं। मुंह सूजा हुआ है। इस मुरदे पर इतना क्रोध उस पर विद्वान् बनता है उनकी आंखों में खून उतर आया। हिंसा-भावना मन में प्रचंड हो उठी। निर्बल क्रोध और चाहे कुछ न कर सके, भगवान् की खबर जरूर लेता है। तुम अंतर्दामी हो, सर्वशक्तिमान हो, दीनों के रक्षक हो और तुम्हारी आंखों के सामने यह अंधेर इस जगत का नियंता कोई नहीं है। कोई दयामय भगवान् सृष्टि का कर्ता होता, तो यह अत्याचार न होता अच्छे सर्वशक्तिमान हो। क्यों नरपिशाचों के हृदय में नहीं पैठ जाते, या वहां तुम्हारी पहुंच नहीं है- कहते हैं, यह सब भगवान् की लीला है। अच्छी लीला है अगर तुम्हें इस व्यापार की खबर नहीं है, तो फिर सर्वव्यापी क्यों कहलाते हो-

समरकान्त धार्मिक प्रवृत्ति के आदमी थे। धर्म-ग्रंथों का अध्ययन किया था। भगवद्गीता का नित्य पाठ किया करते थे, पर इस समय वह सारा धर्मज्ञान उन्हें पाखंड-सा प्रतीत हुआ।

वह उसी तरह उठ खड़े हुए और पूछा-सलीम तो सदर में होगा-

आत्मानन्द ने कहा-आजकल तो यहीं पड़ाव है। डाक बंगले में ठहरे हुए हैं।

'मैं जरा उनसे मिलूंगा।'

'अभी वह क्रोध में हैं, आप मिलकर क्या कीजिएगा। आपको भी अपशब्द कह बैठेंगे।'

'यही देखने तो जाता हूं कि मनुष्य की पशुता किस सीमा तक जा सकती है।'

'तो चलिए, मैं भी आपके साथ चलता हूं।'

गूढ़ बोल उठे-नहीं-नहीं, तुम न जइयो, स्वामीजी भैया, यह हैं तो संन्यासी और दया के अवतार, मुर्दा क्रोध में भी दुर्वासा मुनि से कम नहीं हैं। जब हाकिम साहब सलोनी को मार रहे थे, तब चार आदमी इन्हें पकड़े हुए थे, नहीं तो उस बखत मियां का खून चूस लेते, चाहे पीछे से फांसी हो जाती। गांव भर की मरहम-पट्टी इन्हीं के सुपुर्द है।

सलोनी ने समरकान्त का हाथ पकड़कर कहा-मैं चलूंगी तुम्हारे साथ देवरजी। उसे दिखा दूंगी कि बुढ़िया तेरी छाती पर मूंग दलने को बैठी हुई है तू मारनहार है, तो कोई तुझसे बड़ा राखनहार भी है। जब तक उसका हुकम न होगा, तू क्या मार सकेगा।

भगवान् में उसकी यह अपार निष्ठा देखकर समरकान्त की आंखें सजल हो गईं, सोचा -मुझसे तो ये मूर्ख ही अच्छे जो इतनी पीड़ा और दुःख सहकर भी तुम्हारा ही नाम रटते हैं। बोले-नहीं भाभी, मुझे अकेले जाने दो। मैं अभी उनसे दो-दो बातें करके लौट आता हूँ।

सलोनी लाठी संभाल रही थी कि समरकान्त चल पड़े। तेजा और दुरजन आगे-आगे डाक बंगले का रास्ता दिखाते हुए चले।

तेजा ने पूछा-दादा, जब अमर भैया छोटे-से थे, तो बड़े शैतान थे न-

समरकान्त ने इस प्रश्न का आशय न समझकर कहा-नहीं तो, वह तो लड़कपन ही से बड़ा सुशील था।

दुरजन ताली बजाकर बोला-अब कहो तेजू, हारे कि नहीं- दादा, हमारा-इनका यह झगड़ा है कि यह कहते हैं, जो लड़के बचपन में बड़े शैतान होते हैं, वही बड़े होकर सुशील हो जाते हैं, और मैं कहता हूँ, जो लड़कपन में सुशील होते हैं, वही बड़े होकर भी सुशील रहते हैं। जो बात आदमी में है नहीं वह बीच में कहां से आ जाएगी-

तेजा ने शंका की-लड़के में तो अकल भी नहीं होती, जवान होने पर कहां से आ जाती है- अखुवे में तो खाली दो दल होते हैं, फिर उनमें डाल-पात कहां से आ जाते हैं- यह कोई बात नहीं। मैं ऐसे कितने ही नामी आदमियों के उदाहरण दे सकता हूँ, जो बचपन में बड़े पाजी थे, पर आगे चलकर महात्मा हो गए।

समरकान्त को बालकों के इस तर्क में बड़ा आनंद आया। मध्यस्थ बनकर दोनों ओर कुछ सहारा देते जाते थे। रास्ते में एक जगह कीचड़ भरा हुआ था। समरकान्त के जूते कीचड़ में फंसकर पांव से निकल गए। इस पर बड़ी हंसी हुई।

सामने से पांच सवार आते दिखाई दिए। तेजा ने एक पत्थर उठाकर एक सवार पर निशाना मारा। उसकी पगड़ी जमीन पर गिर पड़ी। वह तो घोड़े से उतरकर पगड़ी उठाने लगा, बाकी चारों घोड़े दौड़ाते हुए समरकान्त के पास आ पहुंचे।

तेजा दौड़कर एक पेड़ पर चढ़ गया। दो सवार उसके पीछे दौड़े और नीचे से गालियां देने लगे। बाकी तीन सवारों ने समरकान्त को घेर लिया और एक ने हंटर निकालकर ऊपर उठाया ही था कि एकाएक चौंक पड़ा और बोला-अरे आप हैं सेठजी आप यहां कहां-

सेठजी ने सलीम को पहचानकर कहा-हां-हां, चला दो हंटर, रुक क्यों गए- अपनी कारगुजारी दिखाने का ऐसा मौका फिर कहां मिलेगा- हाकिम होकर गरीबों पर हंटर न चलाया, तो हाकिमी किस काम की-

सलीम लज्जित हो गया-आप इन लौंडों की शरारत देख रहे हैं, फिर भी मुझी को कसूरवार ठहराते हैं। उसने ऐसा पत्थर मारा कि इन दारोगाजी की पगड़ी गिर गई। खैरियत हुई कि आंख में न लगा।

समरकान्त आवेश में औचित्य को भूलकर बोले-ठीक तो है, जब उस लौंडे ने पत्थर चलाया, जो अभी नादान है, तो फिर हमारे हाकिम साहब जो विद्या के सफर हैं, क्या हंटर भी न चलाएं - कह दो दोनों सवार पेड़ पर चढ़ जाएं, लौंडे को ढकेल दें, नीचे गिर पड़े। मर जाएगा, तो क्या हुआ, हाकिम से बेअदबी करने की सजा तो पा जाएगा।

सलीम ने सफाई दी-आप तो अभी आए हैं, आपको क्या खबर यहां के लोग कितने मुफसिद हैं- एक बुढ़िया ने मेरे मुंह पर थूक दिया, मैंने जब्त किया, वरना सारा गांव जेल में होता।

समरकान्त यह बमगोला खाकर भी परास्त न हुए-तुम्हारे जब्त की बानगी देखे आ रहा हूं बेटा, अब मुंह न खुलवाओ। वह अगर जाहिल बेसमझ औरत थी, तो तुम्हीं ने आलिम-गाजिल होकर कोन-सी शराफत की- उसकी सारी देह लहू-लुहान हो रही है। शायद बचेगी भी नहीं। कुछ याद है कितने आदमियों के अंग-भंग हुए- सब तुम्हारे नाम की दुआएं दे रहे हैं। अगर उनसे रुपये न वसूल होते थे, तो बेदखल कर सकते थे, उनकी फसल कुर्क कर सकते थे। मार-पीट का कानून कहां से निकला-

'बेदखली से क्या नतीजा, जमीन का यहां कौन खरीददार है- आखिर सरकारी रकम कैसे वसूल की जाए?'

'तो मार डालो सारे गांव को, देखो कितने रुपये वसूल होते हैं। तुमसे मुझे ऐसी आशा न थी, मगर शायद हुकूमत में कुछ नशा होता है।'

'आपने अभी इन लोगों की बदमाशी नहीं देखी। मेरे साथ आइए, तो मैं सारी दास्तान सुनाऊं आप इस वक्त आ कहां से रहे हैं?'

समरकान्त ने अपने लखनऊ आने और सुखदा से मिलने का हाल कहा। फिर मतलब की बात छोड़ी-अमर तो यहीं होगा- सुना, तीसरे दरजे में रखा गया है।

अंधेरा ज्यादा हो गया था। कुछ ठंड भी पड़ने लगी थी। चार सवार तो गांव की तरफ चले गए, सलीम घोड़े की रास थामे हुए पांव-पांव समरकान्त के साथ डाक बंगले चला।

कुछ दूर चलने के बाद समरकान्त बोले-तुमने दोस्त के साथ खूब दोस्ती निभाई। जेल भेज दिया, अच्छा किया, मगर कम-से-कम उसे कोई अच्छा दरजा तो दिला देते। मगर हाकिम ठहरे, अपने दोस्त की सिफारिश कैसे करते-

सलीम ने व्यथित कंठ से कहा-आप तो लालाजी, मुझी पर सारा गुस्सा उतार रहे हैं। मैंने तो दूसरा दरजा दिला दिया था मगर अमर खुद मामूली कैदियों के साथ रहने पर जिद करने लगे, तो मैं क्या करता- मेरी बदनसीबी है कि यहां आते ही मुझे वह सब कुछ करना पड़ा, जिससे मुझे नफरत थी।

डाक बंगले पहुंचकर सेठजी एक आरामकुरसी पर लेट गए और बोले-तो मेरा यहां आना व्यर्थ हुआ। जब वह अपनी खुशी से तीसरे दरजे में है, तो लाचारी है। मुलाकात हो जाएगी-

सलीम ने उत्तर दिया-मैं आपके साथ चलूंगा। मुलाकात की तारीख तो अभी नहीं आई है, मगर जेल वाले शायद मान जाएं। हां, अंदेशा अमर की तरफ से है। वह किसी किस्म की रिआयत नहीं चाहते।

उसने जरा मुस्कराकर कहा-अब तो आप भी इन कामों में शरीक होने लगे-

सेठजी ने नम्रता से कहा-अब मैं इस उम्र में क्या काम करूंगा। बूढ़े दिल में जवानी का जोश कहां से आए- बहू जेल में है, लड़का जेल में है, शायद लड़की भी जेल की तैयारी कर रही है और मैं चैन से खाता-पीता हूं। आराम से सोता हूं। मेरी औलाद मेरे पापों का प्रायश्चित्त कर रही है, मैंने गरीबों का कितना खून चूसा है, कितने घर तबाह किए हैं। उसकी याद करके खुद शर्मिदा हो जाता हूं। अगर जवानी में समझ आ गई होती, तो कुछ अपना सुधार करता। अब क्या करूंगा- बाप संतान का गुरु होता है। उसी के पीछे लड़के चलते हैं। मुझे अपने लड़कों के पीछे चलना पड़ा। मैं धर्म की असलियत को न समझकर धर्म के स्वांग को धर्म समझे हुए था। यही मेरी जिंदगी की सबसे बड़ी भूल थी। मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि दुनिया का कैंडा ही बिगड़ा हुआ है। जब तक हमें जायदाद पैदा करने की धुन रहेगी, हम

धर्म से कोसों दूर रहेंगे। ईश्वर ने संसार को क्यों इस ढंग पर लगाया, यह मेरी समझ में नहीं आता। दुनिया को जायदाद के मोह-बंधन से छुड़ाना पड़ेगा, तभी आदमी आदमी होगा, तभी दुनिया से पाप का नाश होगा।

सलीम ऐसी ऊंची बातों में न पड़ना चाहता था। उसने सोचा-जब मैं भी इनकी तरह ज़िंदगी के सुख भोग लूंगा तो मरते-समय फिलासफर बन जाऊंगा। दोनों कई मिनट तक चुपचाप बैठे रहे। फिर लालाजी स्नेह से भरे स्वर में बोले-नौकर हो जाने पर आदमी को मालिक का हुक्म मानना ही पड़ता है। इसकी मैं बुराई नहीं करता। हां, एक बात कहूंगा। जिन पर तुमने जुल्म किया है, चलकर उनके आंसू पोंछ दो। यह गरीब आदमी थोड़ी-सी भलमनसी से काबू में आ जाते हैं। सरकार की नीति तो तुम नहीं बदल सकते, लेकिन इतना तो कर सकते हो कि किसी पर बेजा सख्ती न करो।

सलीम ने शरमाते हुए कहा-लोगों की गुस्ताखी पर गुस्सा आ जाता है, वरना मैं तो खुद नहीं चाहता कि किसी पर सख्ती करूं। फिर सिर पर कितनी बड़ी जिम्मेदारी है। लगान न वसूल हुआ, तो मैं कितना नालायक समझा जाऊंगा-समरकान्त ने तेज होकर कहा-तो बेटा, लगान तो न वसूल होगा, हां आदमियों के खून से हाथ रंग सकते हो।

'यही तो देखना है।'

'देख लेना। मैंने भी इसी दुनिया में बाल सफेद किए हैं। हमारे किसान अफसरों की सूरत से कांपते थे, लेकिन जमाना बदल रहा है। अब उन्हें भी मान-अपमान का खयाल होता है। तुम मुर्ति में बदनामी उठा रहे हो।'

'अपना फर्ज अदा करना बदनामी है, तो मुझे उसकी परवाह नहीं।'

समरकान्त ने अफसरी के इस अभिमान पर हंसकर कहा-फर्ज में थोड़ी-सी मिठास मिला देने से किसी का कुछ नहीं बिगड़ता, हां, बन बहुत कुछ जाता है, यह बेचारे किसान ऐसे गरीब हैं कि थोड़ी-सी हमदर्दी करके उन्हें अपना गुलाम बना सकते हो। हुकूमत वह बहुत झेल चुके। अब भलमनसी का बरताव चाहते हैं। जिस औरत को तुमने हंटरो से मारा, उसे एक बार माता कहकर उसकी गरदन काट सकते थे। यह मत समझो कि तुम उन पर हुकूमत करने आए हो। यह समझो कि उनकी सेवा करने आए हो मान लिया, तुम्हें तलब सरकार से मिलती है, लेकिन आती तो है इन्हीं की गांठ से। कोई मूर्ख हो तो उसे समझाऊं। तुम भगवान् की कृपा से आप ही विद्वान् हो। तुम्हें क्या समझाऊं- तुम पुलिस वालों की बातों में आ गए। यही बात है न-

सलीम भला यह कैसे स्वीकार करता-

लेकिन समरकान्त अड़े रहे-मैं इसे नहीं मान सकता। तुम तो किसी से नजर नहीं लेना चाहते, लेकिन जिन लोगों की रोटियां नोच-खसोट पर चलती हैं उन्होंने जरूर तुम्हें भरा होगा। तुम्हारा चेहरा कहे देता है कि तुम्हें गरीबों पर जुल्म करने का अफसोस है। मैं यह तो नहीं चाहता कि आठ आने से एक पाई भी ज्यादा वसूल करो, लेकिन दिलजोई के साथ तुम बेशी भी वसूल कर सकते हो। जो भूखों मरते हैं चिथड़े पहनकर और पुआल में सोकर दिन काटते हैं उनसे एक पैसा भी दबाकर लेना अन्याय है। जब हम और तुम दो-चार घंटे आराम से काम करके आराम से रहना चाहते हैं, जायदादें बनाना चाहते हैं, शौक की चीजें जमा करते हैं, तो क्या यह अन्याय नहीं है कि जो लोग स्त्री-बच्चों समेत अठारह घंटे रोज काम करें, वह रोटी-कपड़े को तरसें- बेचारे गरीब हैं, बेजबान हैं, अपने को संगठित नहीं कर सकते, इसलिए सभी छोटे-बड़े उन पर रोब जमाते हैं। मगर तुम जैसे सहृदय और विद्वान् लोग भी वही करने लगें, जो मामूली

अमले करते हैं, तो अफसोस होता है। अपने साथ किसी को मत लो, मेरे साथ चलो। मैं जिम्मा लेता हूँ कि कोई तु से गुस्ताखी न करेगा। उनके जख्म पर मरहम रख दो, मैं इतना ही चाहता हूँ। जब तक जिंगे, बेचारे तुम्हें याद करेंगे। सद्भाव में सम्मोहन का-सा असर हो है।

सलीम का हृदय अभी इतना काला न हुआ था कि उस पर कोई रंग ही न चढ़ता। सकुचाता हुआ बोला-मेरी तरफ से आप ही को कहना पड़ेगा।

'हां-हां, यह सब मैं कह दूंगा, लेकिन ऐसा न हो, मैं उधर चलूँ, इधर तुम हंटरबाजी शुरू करो।'

'अब ज्यादा शर्मिंदा न कीजिए।'

'तुम यह तजवीज क्यों नहीं करते कि असामियों की हालत की जांच की जाय। आंखें बंद करके हुक्म मानना तुम्हारा काम नहीं। पहले अपना इत्मीनान तो कर लो कि तुम बेइंसाफी तो नहीं कर रहे हो- तुम खुद ऐसी रिपोर्ट क्यों नहीं लिखते- मुमकिन है हुक्म इसे पसंद न करें, लेकिन हक के लिए कुछ नुकसान उठाना पड़े, तो क्या चिंता?'

सलीम को यह बातें न्याय-संगत जान पड़ीं। खूंट की पतली नोक जमीन के अंदर पहुंच चुकी थी। बोला-इस बुजुर्गाना सलाह के लिए आपका एहसानमंद हूँ और उस पर अमल करने की कोशिश करूंगा।

भोजन का समय आ गया था। सलीम ने पूछा-आपके लिए क्या खाना बनवाऊँ-

'जो चाहे बनवाओ, पर इतना याद रखो कि मैं हिन्दू हूँ और पुराने जमाने का आदमी हूँ। अभी तक छूत-छात को मानता हूँ।'

'आप छूत-छात को अच्छा समझते हैं?'

'अच्छा तो नहीं समझता पर मानता हूँ।'

'तब मानते ही क्यों हैं?'

'इसलिए कि संस्कारों को मिटाना मुश्किल है। अगर जरूरत पड़े, तो मैं तुम्हारा मल उठाकर फेंक दूंगा लेकिन तुम्हारी थाली में मुझसे न खाया जाएगा।'

'मैं तो आज आपको अपने साथ बैठाकर खिलाऊंगा।'

'तुम प्याज, मांस, अंडे खाते हो। मुझसे तो उन बरतनों में खाया ही न जाएगा।'

'आप यह सब कुछ न खाइएगा मगर मेरे साथ बैठना पड़ेगा। मैं रोज साबुन लगाकर नहाता हूँ।'

'बरतनों को खूब साफ करा लेना।'

'आपका खाना हिन्दू बनाएगा, साहब बस, एक मेज पर बैठकर खा लेना।'

'अच्छा खा लूंगा, भाई मैं दूध और घी खूब खाता हूँ।'

सेठजी तो संध्योपासन करने बैठे, फिर पाठ करने लगे। इधर सलीम के साथ के एक हिन्दू कांस्टेबल ने पूरी, कचौरी, हलवा, खीर पकाई। दही पहले ही से रखा हुआ था। सलीम खुद आज यही भोजन करेगा। सेठजी संध्या करके लौटे, तो देखा दो कंबल बिछे हुए हैं और थालियां रखी हुई हैं।

सेठजी ने खुश होकर कहा-यह तुमने बहुत अच्छा इन्तजाम किया।

सलीम ने हंसकर कहा-मैंने सोचा, आपका धर्म क्यों लूं, नहीं एक ही कंबल रखता।

'अगर यह खयाल है, तो तुम मेरे कंबल पर आ जाओ। नहीं, मैं ही आता हूं।'

वह थाली उठाकर सलीम के कंबल पर आ बैठे। अपने विचार में आज उन्होंने अपने जीवन का सबसे महान् त्याग किया। सारी संपत्ति दान देकर भी उनका हृदय इतना गौरवान्वित न होता।

सलीम ने चुटकी ली-अब तो आप मुसलमान हो गए।

सेठजी बोले-मैं मुसलमान नहीं हुआ। तुम हिन्दू हो गए।

चार

प्रातःकाल समरकान्त और सलीम डाकबंगले से गांव की ओर चले। पहाड़ियों से नीली भाप उठ रही थी और प्रकाश का हृदय जैसे किसी अव्यक्त वेदना से भारी हो रहा था। चारों ओर सन्नाटा था। पृथ्वी किसी रोगी की भांति कोहरे के नीचे पड़ी सिहर रही थी। कुछ लोग बंदरों की भांति छप्परों पर बैठे उसकी मरम्मत कर रहे थे और कहीं-कहीं स्त्रियां गोबर पाथ रही थीं। दोनों आदमी पहले सलोनी के घर गए।

सलोनी को ज्वर चढ़ा हुआ था और सारी देह फोड़े की भांति दुख रही थी मगर उसे गाने की धुन सवार थी-

सन्तो देखत जग बौराना।

सांच कहो तो मारन धावे, झूठ जगत पतिआना, सन्तो देखत...

मनोव्यथा जब असह्य और अपार हो जाती है जब उसे कहीं त्राण नहीं मिलता जब वह रुदन और क्रंदन की गोद में भी आश्रय नहीं पाती, तो वह संगीत के चरणों पर जा गिरती है।

समरकान्त ने पुकारा-भाभी, जरा बाहर तो आओ।

सलोनी चटपट उठकर पके बालों को घूंघट से छिपाती, नवयौवना की भांति लजाती आकर खड़ी हो गई और पूछा-
तुम कहां चले गए थे, देवरजी-

सहसा सलीम को देखकर वह एक पग पीछे हट गई और जैसे गाली दी-यह तो हाकिम है ।

फिर सिंहनी की भांति झपटकर उसने सलीम को ऐसा धक्का दिया कि वह गिरते-गिरते बचा, और जब तक समरकान्त उसे हटाएं-हटाएं, सलीम की गरदन पकड़कर इस तरह दबाई, मानो घोंट देगी।

सेठजी ने उसे बल-पूर्वक हटाकर कहा-पगला गई है क्या, भाभी- अलग हट जा, सुनती नहीं-

सलोनी ने फटी-फटी प्रज्वलित आंखों से सलीम को घूरते हुए कहा-मार तो दिखा दूं, आज मेरा सरदार आ गया है सिर कुचलकर रख देगा ।

समरकान्त ने तिरस्कार भरे स्वर में कहा-सरदार के मुंह में कालिख लगा रही हो और क्या- बूढ़ी हो गई, मरने के दिन आ गए और अभी लड़कपन नहीं गया। यही तुम्हारा धर्म है कि कोई हाकिम द्वार पर आए तो उसका अपमान करो ।

सलोनी ने मन में कहा-यह लाला भी ठकुरसुहाती करते हैं। लड़का पकड़ गया है न, इसी से। फिर दुराग्रह से बोली-

पूछो इसने सबको पीटा नहीं था-

सेठजी बिगड़कर बोले-तुम हाकिम होतीं और गांव वाले तुम्हें देखते ही लाठियां ले-लेकर निकल आते, तो तुम क्या करतीं- जब प्रजा लड़ने पर तैयार हो जाय, तो हाकिम क्या पूजा करे अमर होता तो वह लाठी लेकर न दौड़ता- गांव वालों को लाजिम था कि हाकिम के पास आकर अपना-अपना हाल कहते, अरज-विनती करते अदब से, नम्रता से। यह नहीं कि हाकिम को देखा और मारने दौड़े, मानो वह तुम्हारा दुश्मन है। मैं इन्हें समझा-बुझाकर लाया था कि मेल करा दूं, दिलों की सफाई हो जाय, और तुम उनसे लड़ने पर तैयार हो गईं।

यहां की हलचल सुनकर गांव के और कई आदमी जमा हो गए। पर किसी ने सलीम को सलाम नहीं किया। सबकी तयोरियां चढ़ी हुई थीं।

समरकान्त ने उन्हें संबोधित किया-तुम्हीं लोग सोचो। यह साहब तुम्हारे हाकिम हैं। जब रियाया हाकिम के साथ गुस्ताखी करती है, तो हाकिम को भी क्रोध आ जाय तो कोई ताज्जुब नहीं। यह बेचारे तो अपने को हाकिम समझते ही नहीं। लेकिन इज्जत तो सभी चाहते हैं, हाकिम हों या न हों। कोई आदमी अपनी बेइज्जती नहीं देख सकता। बोलो गूदड़, कुछ गलत कहता हूं-

गूदड़ ने सिर झुकाकर कहा-नहीं मालिक, सच ही कहते हो। मुर्दा वह तो बावली है। उसकी किसी बात का बुरा न मानो। सबके मुंह में कालिख लगा रही है और क्या।

'यह हमारे लड़के के बराबर हैं। अमर के साथ पढ़े, उन्हीं के साथ खेले। तुमने अपनी आंखों देखा कि अमर को गिरफ्तार करने यह अकेले आए थे। क्या समझकर क्या पुलिस को भेजकर न पकड़वा सकते थे- सिपाही हुक्म पाते ही आते और धक्के देकर बंध ले जाते। इनकी शराफत थी कि खुद आए और किसी पुलिस को साथ न लाए। अमर ने भी यही किया, जो उसका धर्म था। अकेले आदमी को बेइज्जत करना चाहते, तो क्या मुश्किल था- अब तक जो कुछ हुआ, उसका इन्हें रंज है, हालांकि कसूर तुम लोगों का भी था- अब तुम भी पिछली बातों को भूल जाओ। इनकी तरफ से अब किसी तरह की सख्ती न होगी। इन्हें तुम्हारी जायदाद नीलाम करने का हुक्म मिलेगा, नीलाम करेंगे गिरफ्तार करने का हुक्म मिलेगा, गिरफ्तार करेंगे तुम्हें बुरा न लगना चाहिए। तुम धर्म की लड़ाई लड़ रहे हो। लड़ाई नहीं, यह तपस्या है। तपस्या में क्रोध और द्वेष आ जाता है, तो तपस्या भंग हो जाती है।'

स्वामीजी बोले-धर्म की रक्षा एक ओर से नहीं होती सरकार नीति बनाती है। उसे नीति की रक्षा करनी चाहिए। जब उसके कर्मचारी नीति को पैरों से कुचलते हैं, तो फिर जनता कैसे नीति की रक्षा कर सकती है-

समरकान्त ने फटकार बताई-आप संन्यासी होकर ऐसा कहते हैं, स्वामीजी आपको अपनी नीतिपरकता से अपने शासकों को नीति पर लाना है। यदि वह नीति पर ही होते, तो आपको यह तपस्या क्यों करनी पड़ती- आप अनीति पर अनीति से नहीं, नीति से विजय पा सकते हैं।

स्वामीजी का मुंह जरा-सा निकल आया। जबान बंद हो गई।

सलोनी का पीड़ित हृदय पक्षी के समान पिंजरे से निकलकर भी कोई आश्रय खोज रहा था। सज्जनता और सत्प्रेणा से भरा हुआ यह तिरस्कार उसके सामने जैसे दाने बिखेरने लगा। पक्षी ने दो-चार बार गरदन झुकाकर दानों को सतर्क नेत्रों से देखा, फिर अपने रक्षक को 'आ, आ' करते सुना और पैर फैलाकर दानों पर उतर आया।

सलोनी आंखों में आंसू भरे, दोनों हाथ जोड़े, सलीम के सामने आकर बोली-सरकार, मुझसे बड़ी खता हो गई। माफी दीजिए। मुझे जूतों से पीटिए।

सेठजी ने कहा-सरकार नहीं, बेटा कहो।

'बेटा, मुझसे बड़ा अपराध हुआ। मूरख हूं, बावली हूं। जो चाहे सजा दो।'

सलीम के युवा नेत्र भी सजल हो गए। हुकूमत का रोब और अधिकार का गर्व भूल गया। बोला-माताजी, मुझे शर्मिंदा न करो। यहां जितने लोग खड़े हैं, मैं उन सबसे और जो यहां नहीं हैं, उनसे भी अपनी खताओं की मुआफी चाहता हूं।

गूदड़ ने कहा-हम तुम्हारे गुलाम हैं भैया लेकिन मूरख जो ठहरे, आदमी पहचानते तो क्यों इतनी बातें होतीं-

स्वामीजी ने समरकान्त के कान में कहा-मुझे तो ऐसा जान पड़ता है कि दगा करेगा।

सेठजी ने आश्वासन दिया-कभी नहीं। नौकरी चाहे चली जाय पर तुम्हें सताएगा नहीं। शरीफ आदमी है।

'तो क्या हमें पूरा लगान देना पड़ेगा?'

'जब कुछ है ही नहीं, तो दोगे कहां से?'

स्वामीजी हटे तो सलीम ने आकर सेठजी के कान में कुछ कहा।

सेठजी मुस्कराकर बोले-यह साहब तुम लोगों के दवा-दारू के लिए एक सौ रुपये भेंट कर रहे हैं। मैं अपनी ओर से उसमें नौ सौ रुपये मिलाए देता हूं। स्वामीजी, डाक बंगले पर चलकर मुझसे रुपये ले लो।

गूदड़ ने कृतज्ञता को दबाते हुए कहा-भैया' पर मुख से एक शब्द भी न निकला।

समरकान्त बोले-यह मत समझो कि यह मेरे रुपये हैं। मैं अपने बाप के घर से नहीं लाया। तुम्हीं से, तुम्हारा ही गला दबाकर लिए थे। वह तुम्हें लौटा रहा हूं।

गांव में जहां सियापा छाया हुआ था, वहां रौनक नजर आने लगी। जैसे कोई संगीत वायु में घुल गया हो।

पांच

अमरकान्त को जेल में रोज-रोज का समाचार किसी-न-किसी तरह मिल जाता था। जिस दिन मार-पीट और अग्निकांड की खबर मिली, उसके क्रोध का वारापार न रहा और जैसे आग बुझकर राख हो जाती है, थोड़ी देर के बाद क्रोध की जगह केवल नैराश्य रह गया। लोगों के रोने-पीटने की दर्द-भरी हाय-हाय जैसे मूर्तिमान होकर उसके सामने सिर पीट रही थी। जलते हुए घरों की लपटें जैसे उसे झुलसा डालती थीं। वह सारा भीषण दृश्य कल्पनातीत होकर सर्वनाश के समीप जा पहुंचा था और इसकी जिम्मेदारी किस पर थी- रुपये तो यों भी वसूल किए जाते पर इतना अत्याचार तो न होता, कुछ रियायत तो की जाती। सरकार इस विद्रोह के बाद किसी तरह भी नर्मी का बर्ताव न कर सकती थी, लेकिन रुपया न दे सकना तो किसी मनुष्य का दोष नहीं यह मंदी की बला कहां से आई, कौन जाने- यह तो ऐसा ही है कि आंधी में किसी का छप्पर उड़ जाए और सरकार उसे दंड दे। यह शासन किसके हित के लिए है- इसका उद्देश्य क्या है-

इन विचारों से तंग आकर उसने नैराश्य में मुंह छिपाया। अत्याचार हो रहा है। होने दो। मैं क्या करूं- कर ही क्या

सकता हूं मैं कौन हूं- मुझसे मतलब- कमजोरों के भाग्य में जब तक मार खाना लिखा है, मार खाएंगे। मैं ही यहां क्या फूलों की सेज पर सोया हुआ हूं- अगर संसार के सारे प्राणी पशु हो जाएं, तो मैं क्या करूं- जो कुछ होगा, होगा। यह भी ईश्वर की लीला है वाह रे तेरी लीला अगर ऐसी ही लीलाओं में तुम्हें आनंद आता है, तो तुम दयामय क्यों बनते हो- जबर्दस्त का ठेंगा सिर पर, क्या यह भी ईश्वरीय नियम है-

जब सामने कोई विकट समस्या आ जाती थी, तो उसका मन नास्तिकता की ओर झुक जाता था। सारा विश्व क्रंखला-हीन, अव्यवस्थित, रहस्यमय जान पड़ता था।

उसने बान बटना शुरू किया लेकिन आंखों के सामने एक दूसरा ही अभिनय हो रहा था-वही सलोनी है, सिर के बाल खुले हुए, अर्धनग्न। मार पड़ रही है। उसके रुदन की करुणाजनक ध्वनि कानों में आने लगी। फिर मुन्नी की मूर्ति सामने आ खड़ी हुई। उसे सिपाहियों ने गिरफ्तार कर लिया है और खींचे लिए जा रहे हैं। उसके मुंह से अनायास ही निकल गया-हाय-हाय, यह क्या करते हो फिर वह सचेत हो गया और बान बटने लगा।

रात को भी यह दृश्य आंखों में फिरा करते वही क्रंदन कानों में गूंजा करता। इस सारी विपत्ति का भार अपने सिर पर लेकर वह दबा जा रहा था। इस भार को हल्का करने के लिए उसके पास कोई साधन न था। ईश्वर का बहिष्कार करके उसने मानो नौका का परित्याग कर दिया था और अथाह जल में डूबा जा रहा था। कर्म-जिज्ञासा उसे किसी तिनके का सहारा न लेने देती थी। वह किधर जा रहा है और अपने साथ लाखों निस्सहाय प्राणियों को किधर लिए जा रहा है- इसका क्या अंत होगा- इस काली घटा में कहीं चांदी की झालर है वह चाहता था, कहीं से आवाज आए- बड़े आओ बड़े आओ यही सीधा रास्ता है पर चारों तरफ निविड़, सघन अंधकार था। कहीं से कोई आवाज नहीं आती, कहीं प्रकाश नहीं मिलता। जब वह स्वयं अंधकार में पड़ा हुआ है, स्वयं नहीं जानता आगे स्वर्ग की शीतल छाया है, या विधवंस की भीषण ज्वाला, तो उसे क्या अधिकार है कि इतने प्राणियों की जान आफत में डाले। इसी मानसिक पराभव की दशा में उसके अंतःकरण से निकला-ईश्वर, मुझे प्रकाश दो, मुझे उबारो। और वह रोने लगा।

सुबह का वक्त था, कैदियों की हाजिरी हो गई थी। अमर का मन कुछ शांत था। वह प्रचंड आवेग शांत हो गया था और आकाश में छाई हुई गर्द बैठ गई थी। चीजें साफ-साफ दिखाई देने लगी थीं। अमर मन में पिछली घटनाओं की आलोचना कर रहा था। कारण और कार्य के सूत्रों को मिलाने की चेष्टा करते हुए सहसा उसे एक ठोकर-सी लगी-नैना का वह पत्र और सुखदा की गिरफ्तारी। इसी से तो वह आवेश में आ गया था और समझौते का सुसाध्य मार्ग छोड़कर उस दुर्गम पथ की ओर झुक पड़ा था। इस ठोकर ने जैसे उसकी आंखें खोल दीं। मालूम हुआ, यह यश-लालसा का, व्यक्तिगत स्पर्धा का, सेवा के आवरण में छिपे हुए अहंकार का खेल था। इस अविचार और आवेश का परिणाम इसके सिवा और क्या होता-

अमर के समीप एक कैदी बैठा बान बट रहा था। अमर ने पूछा-तुम कैसे आए, भई-

उसने कौतूहल से देखकर कहा-"पहले तुम बताओ।"

'मुझे तो नाम की धुन थी।'

'मुझे धन की धुन थी।'

उसी वक्त जेलर ने आकर अमर से कहा-तुम्हारा तबादला लखनऊ हो गया है। तुम्हारे बाप आए थे। तुमसे मिलना

चाहते थे। तुम्हारी मुलाकात की तारीख न थी। साहब ने इंकार कर दिया।

अमर ने आश्चर्य से पूछा-मेरे पिताजी यहां आए थे-

'हां-हां, इसमें ताज्जुब की क्या बात है- मि. सलीम भी उनके साथ थे।'

'इलाके की कुछ नई खबर?'

'तुम्हारे बाप ने शायद सलीम साहब को समझाकर गांव वालों से मेल करा दिया है। शरीफ आदमी हैं, गांव वालों के इलाज वगैरह के लिए एक हजार रुपये दे दिए।'

अमर मुस्कराया।

'उन्हीं की कोशिश से तुम्हारा तबादला हो रहा है। लखनऊ में तुम्हारी बीवी भी आ गई हैं। शायद उन्हें छः महीने की सजा हुई है।'

अमर खड़ा हो गया-सुखदा भी लखनऊ में है।

अमर को अपने मन में विलक्षण शांति का अनुभव हुआ। वह निराशा कहां गई- दुर्बलता कहां गई-

वह फिर बैठकर बान बटने लगा। उसके हाथों में आज गजब की फूर्ती है। ऐसा कायापलट ऐसा मंगलमय परिवर्तन क्या अब भी ईश्वर की दया में कोई संदेह हो सकता है- उसने कांटे बोए थे। वह सब फूल हो गए।

सुखदा आज जेल में है। जो भोग-विलास पर आसक्त थी, वह आज दीनों की सेवा में अपना जीवन सार्थक कर रही है। पिताजी, जो पैसों को दांत से पकड़ते थे वह आज परोपकार में रत हैं। कोई दैवी शक्ति नहीं है तो यह सब कुछ किसकी प्रेरणा से हो रहा है।

उसने मन की संपूर्ण श्रद्धा से ईश्वर के चरणों में वंदना की। वह भार, जिसके बोझ से वह दबा जा रहा था, उसके सिर से उतर गया था। उसकी देह हल्की थी, मन हल्का था और आगे आने वाली ऊपर की चढ़ाई, मानो उसका स्वागत कर रही थी।

छः

अमरकान्त को लखनऊ जेल में आए आज तीसरा दिन है। यहां उसे चक्की का काम दिया गया है। जेल के अधिकारियों को मालूम है, वह धानी का पुत्र है, इसलिए उसे कठिन परिश्रम देकर भी उसके साथ कुछ रियायत की जाती है।

एक छप्पर के नीचे चक्कियों की कतारें लगी हुई हैं। दो-दो कैदी हरेक चक्की के पास खड़े आटा पीस रहे हैं। शाम को आटे की तौल होगी। आटा कम निकला, तो दंड मिलेगा।

अमर ने अपने संगी से कहा-जरा ठहर जाओ भाई, दम ले लूं, मेरे हाथ नहीं चलते। क्या नाम है तुम्हारा- मैंने तो शायद तुम्हें कहीं देखा है।

संगी गठीला, काला, लाल आंखों वाला, कठोर आकृति का मनुष्य था, जो परिश्रम से थकना न जानता था। मुस्कराकर बोला-मैं वही काले खां हूं, एक बार तुम्हारे पास सोने के कड़े बेचने गया था। याद करो लेकिन तुम यहां

कैसे आ फंसे, मुझे यह ताज्जुब हो रहा है। परसों से ही पूछना चाहता था पर सोचता था, कहीं धोखा न हो रहा हो।

अमर ने अपनी कथा संक्षेप में कह सुनाई और पूछा-तुम कैसे आए-

काले खां हंसकर बोला-मेरी क्या पूछते हो लाला, यहां तो छः महीने बाहर रहते हैं, तो छः साल भीतर। अब तो यही आरजू है कि अल्लाह यहीं से बुला ले। मेरे लिए बाहर रहना मुसीबत है। सबको अच्छा-अच्छा पहनते, अच्छा-अच्छा खाते देखता हूं, तो हसद होता है, पर मिले कहां से- कोई हुनर आता नहीं, इलम है नहीं। चोरी न करूं, डाका न माई, तो खाऊं क्या- यहां किसी से हसद नहीं होता, न किसी को अच्छा पहनते देखता हूं, न अच्छा खाते। सब अपने ही जैसे हैं, फिर डाह और जलन क्यों हो- इसीलिए अल्लाहताला से दुआ करता हूं कि यहीं से बुला ले। छूटने की आरजू नहीं है। तुम्हारे हाथ दुख गए हों तो रहने दो। मैं अकेला ही पीस डालूंगा। तुम्हें इन लोगों ने यह काम दिया ही क्यों- तुम्हारे भाई-बंद तो हम लोगों से अलग, आराम से रखे जाते हैं। तुम्हें यहां क्यों डाल दिया- हट जाओ।

अमर ने चक्की की मुठिया जोर से पकड़कर कहा-नहीं-नहीं, मैं थका नहीं हूं। दो-चार दिन में आदत पड़ जाएगी, तो तुम्हारे बराबर काम करूंगा।

काले खां ने उसे पीछे हटाते हुए कहा-मगर यह तो अच्छा नहीं लगता कि तुम मेरे साथ चक्की पीसो। तुमने जुर्म नहीं किया है। रियाया के पीछे सरकार से लड़े हो, तुम्हें मैं न पीसने दूंगा। मालूम होता है तुम्हारे लिए ही अल्लाह ने मुझे यहां भेजा है। वह तो बड़ा कारसाज आदमी है। उसकी कुदरत कुछ समझ में नहीं आती। आप ही आदमी से बुराई करवाता है आप ही उसे सजा देता है, और आप ही उसे मुआफ कर देता है।

अमर ने आपत्ति की-बुराई खुदा नहीं कराता, हम खुद करते हैं।

काले खां ने ऐसी निगाहों से उसकी ओर देखा, जो कह रही थी, तुम इस रहस्य को अभी नहीं समझ सकते-ना-ना, मैं यह नहीं मानूंगा। तुमने तो पढ़ा होगा, उसके हुक्म के बगैर एक पत्ता भी नहीं हिल सकता, बुराई कौन करेगा- सब कुछ वही करवाता है, और फिर माफ भी कर देता है। यह मैं मुंह से कह रहा हूं। जिस दिन मेरे ईमान में यह बात जम जाएगी, उसी दिन बुराई बंद हो जाएगी। तुम्हीं ने उस दिन मुझे वह नसीहत सिखाई थी। मैं तुम्हें अपना पीर समझता हूं। दो सौ की चीज तुमने तीस रुपये में न ली। उसी दिन मुझे मालूम हुआ, 0 बदी क्या चीज है। अब सोचता हूं, अल्लाह को क्या मुंह दिखाऊंगा- ज़िंदगी में इतने गुनाह किए हैं कि जब उनकी याद आती है, तो रोंए खड़े हो जाते हैं। अब तो उसी की रहीमी का भरोसा है। क्यों भैया, तुम्हारे मजहब में क्या लिखा है- अल्लाह गुनहगारों को मुआफ कर देता है-

काले खां की कठोर मुद्रा इस गहरी, सजीव, सरल भक्ति से प्रदीप्त हो उठी, आंखों में कोमल छटा उदय हो गई। और वाणी इतनी मर्मस्पर्शी, इतनी आर्द्र थी कि अमर का हृदय पुलकित हो उठा-सुनता तो हूं खां साहब, कि वह बड़ा दयालु है।

काले खां दूने वेग से चक्की घुमाता हुआ बोला-बड़ा दयालु है, भैया मां के पेट में बच्चे को भोजन पहुंचाता है। यह दुनिया ही उसकी रहीमी का आईना है। जिधर आंखें उठाओ, उसकी रहीमी के जलवे। इतने खूनी-डाकू यहां पड़े हुए हैं, उनके लिए भी आराम का सामान कर दिया। मौका देता है, बार-बार मौका देता है कि अब भी संभल जावें। उसका गुस्सा कौन सहेगा, भैया- जिस दिन उसे गुस्सा आवेगा, यह दुनिया जहन्नम को चली जाएगी। हमारे-तुम्हारे ऊपर वह क्यों गुस्सा करेगा- हम चींटी को पैरों तले पड़ते देखकर किनारे से निकल जाते हैं। उसे कुचलते रहम आता है। जिस अल्लाह ने हमको बनाया, जो हमको पालता है, वह हमारे ऊपर कभी गुस्सा कर सकता है- कभी नहीं।

अमर को अपने अंदर आस्था की एक लहर-सी उठती हुई जान पड़ी। इतने अटल विश्वास और सरल श्रद्धा के साथ इस विषय पर उसने किसी को बातें करते न सुना था। बात वही थी, जो वह नित्य छोटे-बड़े के मुंह से सुना करता था, पर निष्ठा ने उन शब्दों में जान सी डाल दी थी।

जरा देर बाद वह फिर बोला-भैया, तुमसे चक्की चलवाना तो ऐसे ही है, जैसे कोई तलवार से चिड़िए को हलाल करे। तुम्हें अस्पताल में रखना चाहिए था, बीमारी में दवा से उतना फायदा नहीं होता, जितना मीठी बात से हो जाता है। मेरे सामने यहां कई कैदी बीमार हुए पर एक भी अच्छा न हुआ। बात क्या है- दवा कैदी के सिर पर पटक दी जाती है, वह चाहे पिए चाहे फेंक दे।

अमर को इस काली-कलूटी काया में स्वर्ण-जैसा हृदय चमकता दीख पड़ा। मुस्कराकर बोला-लेकिन दोनों काम साथ-साथ कैसे करूंगा-

'मैं अकेला चक्की चला लूंगा और पूरा आटा तुलवा दूंगा।'

'तब तो सारा सवाब तुम्हीं को मिलेगा।'

काले खां ने साधु-भाव से कहा-भैया, कोई काम सवाब समझकर नहीं करना चाहिए। दिल को ऐसा बना लो कि सवाब में उसे वही मजा आवे, जो गाने या खेलने में आता है। कोई काम इसलिए करना कि उससे नजात मिलेगी, रोजगार है फिर मैं तुम्हें क्या समझाऊं तुम खुद इन बातों को मुझसे ज्यादा समझते हो। मैं तो मरीज की तीमारदारी करने के लायक ही नहीं हूं। मुझे बड़ी जल्दी गुस्सा आ जाता है। कितना चाहता हूं कि गुस्सा न आए पर जहां किसी ने दो-एक बार मेरी बातें न मानीं और मैं बिगड़ा।

वही डाकू, जिसे अमर ने एक दिन अधमता के पैरों के नीचे लोटते देखा था, आज देवत्व के पद पर पहुंच गया था। उसकी आत्मा से मानो एक प्रकाश-सा निकलकर अमर के अंतःकरण को अवलोकित करने लगा।

उसने कहा-लेकिन यह तो बुरा मालूम होता है कि मेहनत का काम तुम करो और मैं...

काले खां ने बात काटी-भैया, इन बातों में क्या रखा है- तुम्हारा काम इस चक्की से कहीं कठिन होगा। तुम्हें किसी के बात करने तक की मुहलत न मिलेगी। मैं रात को मीठी नींद सोऊंगा। तुम्हें रातें जाफकर काटनी पड़ेंगी। जान-जोखिम भी तो है। इस चक्की में क्या रखा है- यह काम तो गधा भी कर सकता है, लेकिन जो काम तुम करोगे, वह विरले कर सकते हैं।

सूर्यास्त हो रहा था। काले खां ने अपने पूरे गेहूं पीस डाले थे और दूसरे कैदियों के पास जा-जाकर देख रहा था, किसका कितना काम बाकी है। कई कैदियों के गेहूं अभी समाप्त नहीं हुए थे। जेल कर्मचारी आटा तौलने आ रहा होगा। इन बेचारों पर आफत आ जाएगी, मार पड़ने लगेगी। काले खां ने एक-एक चक्की के पास जाकर कैदियों की मदद करनी शुरू की। उसकी फुर्ती और मेहनत पर लोगों को विस्मय होता था। आधा घंटे में उसने फिसड्डियों की कमी पूरी कर दी। अमर अपनी चक्की के पास खड़ा सेवा के पुतले को श्रद्धा-भरी आंखों से देख रहा था, मानो दिव्य दर्शन कर रहा हो।

काले खां इधर से फुरसत पाकर नमाज पढ़ने लगा। वहीं बरामदे में उसने वजू किया, अपना कंबल जमीन पर बिछा दिया और नमाज शुरू की। उसी वक्त जेलर साहब चार वार्डों के साथ आटा तुलवाने आ पहुंचे। कैदियों ने अपना-

अपना आटा बोरियों में भरा और तराजू के पास आकर खड़ा हो गए। आटा तुलने लगा।

जेलर ने अमर से पूछा-तुम्हारा साथी कहां गया-

अमर ने बताया, नमाज पढ़ रहा है।

'उसे बुलाओ। पहले आटा तुलवा ले, फिर नमाज पढ़े। बड़ा नमाजी की दुम बना है। कहां गया है नमाज पढ़ने?'

अमर ने शेड के पीछे की तरफ इशारा करके कहा-उन्हें नमाज पढ़ने दें आप आटा तौल लें।

जेलर यह कब देख सकता था कि कोई कैदी उस वक्त नमाज पढ़ने जाय, जब जेल के साक्षात् प्रभु पधारे हों शेड के पीछे जाकर बोले-अबे ओ नमाजी के बच्चे, आटा क्यों नहीं तुलवाता- बचा, गेहू चबा गए हो, तो नमाज का बहाना करने लगे। चल चटपट, वरना मारे हंटरो के चमड़ी उधोड़ दूंगा।

काले खां दूसरी ही दुनिया में था।

जेलर ने समीप जाकर अपनी छड़ी उसकी पीठ में चुभाते हुए कहा-बहरा हो गया है क्या बे- शामतें तो नहीं आई हैं-

काले खां नमाज में मग्न था। पीछे फिरकर भी न देखा।

जेलर ने झल्लाकर लात जमाई। कालें खां सिजदे के लिए झुका हुआ था। लात खाकर औंधो मुंह गिर पड़ा पर तुरंत संभलकर फिर सिजदे में झुक गया। जेलर को अब जिद पड़ गई कि उसकी नमाज बंद कर दे। संभव है काले खां को भी जिद पड़ गई हो कि नमाज पूरी किए बगैर न उठूंगा। वह तो सिजदे में था। जेलर ने उसे बूटदार ठोकरें जमानी शुरू कीं एक वार्डन ने लपककर दो गारद सिपाही बुला लिए। दूसरा जेलर साहब की कुमक पर दौड़ा। काले खां पर एक तरफ से ठोकरें पड़ रही थीं, दूसरी तरफ से लकड़ियों पर वह सिजदे से सिर न उठाता था। हां, प्रत्येक आघात पर उसके मुंह से 'अल्लाहो अकबर ।' की दिल हिला देने वाली सदा निकल जाती थी। उधर आघातकारियों की उत्तेजना भी बढ़ती जाती थी। जेल का कैदी जेल के खुदा को सिजदा न करके अपने खुदा को सिजदा करे, इससे बड़ा जेलर साहब का क्या अपमान हो सकता था यहां तक कि काले खां के सिर से रूधिर बहने लगा। अमरकान्त उसकी रक्षा करने के लिए चला था कि एक वार्डन ने उसे मजबूती से पकड़ लिया। उधर बराबर आघात हो रहे थे और काले खां बराबर 'अल्लाहो अकबर' की सदा लगाए जाता था। आखिर वह आवाज क्षीण होते-होते एक बार बिल्कुल बंद हो गई और कालें खां रक्त बहने से शिथिल हो गया। मगर चाहे किसी के कानों में आवाज न जाती हो, उसके होंठ अब भी खुल रहे थे और अब भी 'अल्लाहो अकबर' की अव्यक्त ध्वनि निकल रही थी।

जेलर ने खिसियाकर कहा-पड़ा रहने दो बदमाश को यहीं कल से इसे खड़ी बेड़ी दूंगा और तनहाई भी। अगर तब भी न सीधा हुआ, तो उलटी होगी। इसका नमाजीपन निकाल न दूं तो नाम नहीं।

एक मिनट में वार्डन, जेलर, सिपाही सब चले गए। कैदियों के भोजन का समय आया, सब-के-सब भोजन पर जा बैठे। मगर काले खां अभी वहीं औंधा पड़ा था। सिर और नाक तथा कानों से खून बह रहा था। अमरकान्त बैठा उसके घावों को पानी से धोरहा था और खून बंद करने का प्रयास कर रहा था। आत्मशक्ति के इस कल्पनातीत उदाहरण ने उसकी भौतिक बुद्धि को जैसे आक्रांत कर दिया। ऐसी परिस्थिति में क्या वह इस भांति निश्चल और संयमित बैठा रहता- शायद पहले ही आघात में उसने या तो प्रतिकार किया होता या नमाज छोड़कर अलग हो जाता। विज्ञान और नीति और देशानुराग की वेदी पर बलिदानों की कमी नहीं। पर यह निश्चल धैर्य ईश्वर-निष्ठा ही का प्रसाद है।

कैदी भोजन करके लौटे। काले खां अब भी वहीं पड़ा हुआ था। सभी ने उसे उठाकर बैरक में पहुंचाया और डॉक्टर को सूचना दी पर उन्होंने रात को कष्ट उठाने की जरूरत न समझी। वहां और कोई दवा भी न थी। गर्म पानी तक न मयस्सर हो सका।

उस बैरक के कैदियों ने रात बैठकर काटी। कई आदमी आमादा थे कि सुबह होते ही जेलर साहब की मरम्मत की जाय। यही न होगा, साल-साल भर की मियाद और बढ़ जाएगी। क्या परवाह अमरकान्त शांत प्रकृति का आदमी था, पर इस समय वह भी उन्हीं लोगों में मिला हुआ था। रात-भर उसके अंदर पशु और मनुष्य में द्वंद्व होता रहा। वह जानता था, आग आग से नहीं, पानी से शांत होती है। इंसान कितना ही हैवान हो जाय उसमें कुछ न कुछ आदमीयत रहती ही है। वह आदमीयत अगर जाग सकती है, तो ग्लानि से, या पश्चाताप से। अमर अकेला होता, तो वह अब भी विचलित न होता लेकिन सामूहिक आवेश ने उसे भी अस्थिर कर दिया। समूह के साथ हम कितने ही ऐसे अच्छे-बुरे काम कर जाते हैं, जो हम अकेले न कर सकते। और काले खां की दशा जितनी ही खराब होती जाती थी, उतनी ही प्रतिशोध की ज्वाला भी प्रचंड होती जाती थी।

एक डाके के कैदी ने कहा-खून पी जाऊंगा, खून उसने समझा क्या है यही न होगा, फांसी हो जाएगी-

अमरकान्त बोला-उस वक्त क्या समझे थे कि मारे ही डालता है।

चुपके-चुपके षडयंत्र रचा गया, आघातकारियों का चुनाव हुआ, उनका कार्य विधन निश्चय किया गया। सफाई की दलीलें सोच निकाली गईं।

सहसा एक ठिगने कैदी ने कहा-तुम लोग समझते हो, सवेरे तक उसे खबर न हो जाएगी-

अमर ने पूछा-खबर कैसे होगी- यहां ऐसा कौन है, जो उसे खबर दे दे-

ठिगने कैदी ने दाएं-बाएं आंखें घुमाकर कहा-खबर देने वाले न जाने कहां से निकल आते हैं, भैया- किसी के माथे पर तो कुछ लिखा नहीं, कौन जाने हमीं में से कोई जाकर इत्तिला कर दे- रोज ही तो लोगों को मुखबिर बनते देखते हो। वही लोग जो अगुआ होते हैं, अवसर पड़ने पर सरकारी गवाह बन जाते हैं। अगर कुछ करना है, तो अभी कर डालो। दिन को वारदात करोगे, सब-के-सब पकड़ लिए जाओगे। पांच-पांच साल की सजा ठुकजाएगी।

अमर ने संदेह के स्वर में पूछा-लेकिन इस वक्त तो वह अपने क्वार्टर में सो रहा होगा-

ठिगने कैदी ने राह बताई-यह हमारा काम है भैया, तुम क्या जानो-

सबों ने मुंह मोड़कर कनफुसकियों में बातें शुरू कीं। फिर पांचों आदमी खड़े हो गए।

ठिगने कैदी ने कहा-हममें से जो छुटे, उसे गऊ हत्या।

यह कहकर उसने बड़े जोर से हाय-हाय करना शुरू किया। और भी कई आदमी चीखने चिल्लाने लगे। एक क्षण में वार्डन ने द्वार पर आकर पूछा-तुम लोग क्यों शोर कर रह ेहो- क्या बात है-

ठिगने कैदी ने कहा-बात क्या है, काले खां की हालत खराब है। जाकर जेलर साहब को बुला लाओ। चटपट।

वार्डन बोला-वाह बे चुपचाप पड़ा रह बड़ा नवाब का बेटा बना है।

'हम कहते हैं जाकर उन्हें भेज दो नहीं, ठीक नहीं होगा।'

काले खां ने आंखें खोलीं और क्षीण स्वर में बोला-क्यों चिल्लाते हो यारो, मैं अभी मरा नहीं हूँ। जान पड़ता है, पीठ की हड्डी में चोट है।

ठिगने कैदी ने कहा-उसी का बदला चुकाने की तैयारी है पठान ।

काले खां तिरस्कार के स्वर में बोला-किससे बदला चुकाओगे भाई, अल्लाह से- अल्लाह की यही मरजी है, तो उसमें दूसरा कौन दखल दे सकता है- अल्लाह की मर्जी के बिना कहीं एक पत्ती भी हिल सकती है- जरा मुझे पानी पिला दो। और देखो, जब मैं मर जाऊँ, तो यहां जितने भाई हैं, सब मेरे लिए खुदा से दुआ करना। और दुनिया में मेरा कौन है- शायद तुम लोगों की दुआ से मेरी निजात हो जाय।

अमर ने उसे गोद में संभालकर पानी पिलाना चाहा मगर घूंट कंठ के नीचे न उतरा। वह जोर से कराहकर फिर लेट गया।

ठिगने कैदी ने दांत पीसकर कहा-ऐसे बदमास की गरदन तो उलटी छुरी से काटनी चाहिए ।

काले खां दीनभाव से रुक-रुककर बोला-क्यों मेरी नजात का द्वार बंद करते हो, भाई दुनिया तो बिगड़ गई क्या आकबत भी बिफाडना चाहते हो- अल्लाह से दुआ करो, सब पर रहम करे। जिंदगी में क्या कम गुनाह किए हैं कि मरने के पीछे पांव में बेड़ियां पड़ी रहें या अल्लाह, रहम कर।

इन शब्दों में मरने वाले की निर्मल आत्मा मानो व्याप्त हो गई थी। बातें वही थीं, तो रोज सुना करते थे, पर इस समय इनमें कुछ ऐसे द्रावक, कुछ ऐसी हिला देने वाली सिंथी कि सभी जैसे उसमें नहा उठे। इस चुटकी भर राख ने जैसे उनके तापमय विकारों को शांत कर दिया।

प्रातःकाल जब काले खां ने अपनी जीवन-लीला समाप्त कर दी तो ऐसा कोई कैदी न था, जिसकी आंखों से आंसू न निकल रहे हों पर औरों का रोना दुःख का था, अमर का रोना सुख का था। औरों को किसी आत्मीय के खो देने का सदमा था, अमर को उसके और समीप हो जाने का अनुभव हो रहा था। अपने जीवन में उसने यही एक नवरत्न पाया था, जिसके सम्मुख वह श्रद्धा से सिर झुका सकता था और जिससे वियोग हो जाने पर उसे एक वरदान पा जाने का भान होता था।

इस प्रकाश-स्तंभ ने आज उसके जीवन को एक दूसरी ही धारा में डाल दिया जहां संशय की जगह विश्वास, और शंका की जगह सत्य मूर्तिमान हो गया था।

सात

लाला समरकान्त के चले जाने के बाद सलीम ने हर एक गांव का दौरा करके असामियों की आर्थिक दशा की जांच करनी शुरू की। अब उसे मालूम हुआ कि उनकी दशा उससे कहीं हीन है, जितनी वह समझे बैठा था। पैदावर का मूल्य लागत और लगान से कहीं कम था। खाने-कपड़े की भी गुंजाइश न थी, दूसरे खर्चों का क्या जिक्र- ऐसा कोई बिरला ही किसान था, जिसका सिर के नीचे न दबा हो। कॉलेज में उसने अर्थशास्त्र अवश्य पढ़ा था और जानता था कि यहां के किसानों की हालत खराब है, पर अब ज्ञात हुआ है कि पुस्तक-ज्ञान और प्रत्यक्ष व्यवहार में वही अंतर है, जो किसी मनुष्य और उसके चित्र में है। ज्यों-ज्यों असली हालत मालूम होती जाती थी उसे असामियों से सहानुभूति होती जाती थी। कितना अन्याय है कि जो बेचारे रोटियों को मुंहताज हों, जिनके पास तन ढकने को केवल चीथड़े हों,

जो बीमारी में एक पैसे की दवा भी न कर सकते हों। जिनके घरों में दीपक भी न जलते हों, उनसे पूरा लगान वसूल किया जाए। जब जिस मंहगी थी, तब किसी तरह एक जून रोटियां मिल जाती थीं। इस मंदी में तो उनकी दशा वर्णनातीत हो गई है। जिनके लड़के पांच-छः बरस की उम्र से मेहनत-मजूरी करने लगे, जो ईंधन के लिए हार में गोबर चुनते फिरें, उनसे पूरा लगान वसूल करना, मानो उनके मुंह से रोटी का टुकड़ा छीन लेना है, उनकी रक्त-हीन देह से खून चूसना है।

परिस्थिति का यथार्थ ज्ञान होते ही सलीम ने अपने कर्तव्य का निश्चय कर लिया। वह उन आदमियों में न था, जो स्वार्थ के लिए अफसरों के हर एक हुक्म की पाबंदी करते हैं। वह नौकरी करते हुए भी आत्मा की रक्षा करना चाहता था। कई दिन एकांत में बैठकर उसने विस्तार के साथ अपनी रिपोर्ट लिखी और मि. गजनवी के पास भेज दी। मि. गजनवी ने उसे तुरंत लिखा-आकर मुझसे मिल जाओ। सलीम उनसे मिलना न चाहता था। डरता था, कहीं यह मेरी रिपोर्ट को दबाने का प्रस्ताव न करें, लेकिन फिर सोचा-चलने में हर्ज ही क्या है- अगर मुझे कायल कर दें, तब तो कोई बात नहीं लेकिन अफसरों के भय से मैं अपनी रिपोर्ट को कभी न दबने दूंगा। उसी दिन वह संध्या समय सदर पहुंचा।

मि. गजनवी ने तपाक से हाथ बढ़ाते हुए कहा-मि. अमरकान्त के साथ तो तुमने दोस्ती का हक खूब अदा किया। वह खुद शायद इतनी मुफस्सिल रिपोर्ट न लिख सकते लेकिन तुम क्या समझते हो, सरकार को यह बातें मालूम नहीं-

सलीम ने कहा-मेरा तो ऐसा ही खयाल है। उसे जो रिपोर्ट मिलती है, वह खुशामदी अहलकारों से मिलती है, जो रिआया का खून करके भी सरकार का घर भरना चाहते हैं। मेरी रिपोर्ट वाकयात पर लिखी गई है।

दोनों अफसरों में बहस होने लगी। गजनवी कहता था-हमारा काम केवल अफसरों की आज्ञा मानना है। उन्होंने लगान वसूल करने की आज्ञा दी। हमें लगान वसूल करना चाहिए। प्रजा को कष्ट होता है तो हो, हमें इससे प्रयोजन नहीं। हमें खुद अपनी आमदनी का टैक्स देने में कष्ट होता है लेकिन मजबूर होकर देते हैं। कोई आदमी खुशी से टैक्स नहीं देता।

गजनवी इस आज्ञा का विरोध करना अनीति ही नहीं, अधर्म समझता था। केवल जाबते की पाबंदी से उसे संतोष न हो सकता था। वह इस हुक्म की तामील करने के लिए सब कुछ करने को तैयार था। सलीम का कहना था-हम सरकार के नौकर केवल इसलिए हैं कि प्रजा की सेवा कर सकें, उसे सुदशा की ओर ले जा सकें, उसकी उन्नति में सहायक हो सकें। यदि सरकार की किसी आज्ञा से इन उद्देश्यों की पूर्ति में बाधा पड़ती है, तो हमें उस आज्ञा को कदापि न मानना चाहिए।

गजनवी ने मुंह लंबा करके कहा-मुझे खौफ है कि गवर्नमेंट तुम्हारा यहां से तबादला कर देगी।

'तबादला कर दे इसकी मुझे परवाह नहीं लेकिन मेरी रिपोर्ट पर गौर करने का वादा करे। अगर वह मुझे यहां से हटा कर मेरी रिपोर्ट को दाखिल दफ्तर करना चाहेगी, तो मैं इस्तीफा दे दूंगा।'

गजनवी ने विस्मय से उसके मुंह की ओर देखा।

'आप गवर्नमेंट की दिक्कतों का मुतलक अंदाजा नहीं कर रहे हैं। अगर वह इतनी आसानी से दबने लगे, तो आप समझते हैं, रिआया कितनी शेर हो जाएगी जरा-जरा-सी बात पर तूफान खड़े हो जाएंगे। और यह महज इस इलाके

का मुआमला नहीं है, सारे मुल्क में यही तहरीक जारी है। अगर सरकार अस्सी फीसदी काश्तकारों के साथ रियायत करे, तो उसके लिए मुल्क का इंतजाम करना दुश्वार हो जाएगा।'

सलीम ने प्रश्न किया-गवर्नमेंट रियाया के लिए है, रियाया गवर्नमेंट के लिए नहीं। काश्तकारों पर जुल्म करके, उन्हें भूखों मारकर अगर गवर्नमेंट जिंदा रहना चाहती है, तो कम-से-कम मैं अलग हो जाऊंगा। अगर मालियत में कमी आ रही है तो सरकार को अपना खर्च घटाना चाहिए, न कि रियाया पर सख्तियां की जाएं।

गजनवी ने बहुत ऊंच-नीच सुझाया लेकिन सलीम पर कोई असर न हुआ। उसे डंडों से लगान वसूल करना किसी तरह मंजूर न था। आखिर गजनवी ने मजबूर होकर उसकी रिपोर्ट ऊपर भेज दी, और एक ही सप्ताह के अंदर गवर्नमेंट ने उसे पृथक् कर दिया। ऐसे भयंकर विद्रोही पर वह कैसे विश्वास करती-

जिस दिन उसने नए अफसर को चार्ज दिया और इलाके से विदा होने लगा, उसके डेरे के चारों तरफ स्त्री-पुरुषों का एक मेला लग गया और सब उससे मिन्नतें करने लगे, आप इस दशा में हमें छोड़कर न जाएं। सलीम यही चाहता था। बाप के भय से घर न जा सकता था। फिर इन अनाथों से उसे स्नेह हो गया था। कुछ तो दया और कुछ अपने अपमान ने उसे उनका नेता बना दिया। वही अफसर जो कुछ दिन पहले अफसरी के मद से भरा हुआ आया था, जनता का सेवक बन बैठा। अत्याचार सहना अत्याचार करने से कहीं ज्यादा गौरव की बात मालूम हुई।

आंदोलन की बागडोर सलीम के हाथ में आते ही लोगों के हौसले बंध गए। जैसे पहले अमरकान्त आत्मानन्द के साथ गांव-गांव दौड़ा करता था, उसी तरह सलीम दौड़ने लगा। वही सलीम, जिसके खून के लोग प्यासे हो रहे थे, अब उस इलाके का मुकुटहीन राजा था। जनता उसके पसीने की जगह खून बहाने को तैयार थी।

संध्या हो गई थी। सलीम और आत्मानन्द दिन-भर काम करने के बाद लौटे थे कि एकाएक नए बंगाली सिविलियन मि. घोष पुलिस कर्मचारियों के साथ आ पहुंचे और गांव भर के मवेशियों की कुर्क करने की घोषणा कर दी। कुछ कसाई पहले ही से बुला लिए गए थे। वे सस्ता सौदा खरीदने को तैयार थे। दम-के-दम में कांस्टेबलों ने मवेशियों को खोल-खोलकर मदरसे के द्वार पर जमा कर दिया। गूदड़, भोला, अलगू सभी चौधरी गिरफ्तार हो चुके थे। फसल की कुर्की तो पहले ही हो चुकी थी मगर फसल में अभी क्या रखा था- इसलिए अब अधिकारियों ने मवेशियों को कुर्क करने का निश्चय किया था। उन्हें विश्वास था कि किसान मवेशियों की कुर्की देखकर भयभीत हो जाएंगे, और चाहे उन्हें कर्ज लेना पड़े, या स्त्रियों के गहने बेचने पड़ें, वे जानवरों को बचाने के लिए सब कुछ करने को तैयार होंगे। जानवर किसान के दाहिने हाथ हैं।

किसानों ने यह घोषणा सुनी, तो छक्के छूट गए। वे समझे बैठे थे कि सरकार और जो चाहे करे, पर मवेशियों को कुर्क न करेगी। क्या वह किसानों की जड़ खोदकर फेंक देगी।

यह घोषणा सुनकर भी वे यही समझ रहे थे कि यह केवल धामकी है लेकिन जब मवेशी मदरसे के सामने जमा कर दिए गए और कसाइयों ने उनकी देखभाल शुरू की तो सभी पर जैसे वज्राघात हो गया। अब समस्या उस सीमा तक पहुंची थी, जब रक्त का आदान-प्रदान आरंभ हो जाता है।

चिराग जलते-जलते जानवरों का बाजार लग गया। अधिकारियों ने इरादा किया है कि सारी रकम एकजाई वसूल करें। गांव वाले आपस में लड़-भिड़कर अपने-अपने लगान का फैसला कर लेंगे। इसकी अधिकारियों को कोई चिंता नहीं है।

सलीम ने आकर मि. घोष से कहा-आपको मालूम है कि मवेशियों को कुर्क करने का आपको मजाज नहीं है-

मि. घोष ने उग्र भाव से जवाब दिया-यह नीति ऐसे अवसरों के लिए नहीं है। विशेष अवसरों के लिए विशेष नीति होती है। क्रांति की नीति, शांति की नीति से भिन्न होनी स्वाभाविक है।

अभी सलीम ने कुछ उत्तर न दिया था कि मालूम हुआ, अहीरों के मुहाल में लाठी चल गई। मि. घोष उधर लपके। सिपाहियों ने भी संगीनें चढ़ाई और उनके पीछे चले। काशी, पयाग, आत्मानन्द सब उसी तरफ दौड़े। केवल सलीम यहां खड़ा रहा। जब एकांत हो गया, तो उसने कसाइयों के सरगना के पास जाकर सलाम-अलेक किया और बोला-क्यों भाई साहब, आपको मालूम है, आप लोग इन मवेशियों को खरीदकर यहां की गरीब रिआया के साथ कितनी बड़ी बेइंसाफी कर रहे हैं-

सरगना का नाम तेगमुहम्मद था। नाटे कद का गठीला आदमी था, पूरा पहलवान। ढीला कुर्ता, चारखाने की तहमद, गले में चांदी की तावीज, हाथ में माटा सोंटा। नम्रता से बोला -साहब, मैं तो माल खरीदने आया हूं। मुझे इससे क्या मतलब कि माल किसका है और कैसा है- चार पैसे का फायदा जहां होता है वहां आदमी जाता ही है।

'लेकिन यह तो सोचिए कि मवेशियों की कुर्की किस सबब से हो रही है- रिआया के साथ आपको हमदर्दी होनी चाहिए।'

तेगमुहम्मद पर कोई प्रभाव न हुआ-सरकार से जिसकी लड़ाई होगी, उसकी होगी। हमारी कोई लड़ाई नहीं है।

'तुम मुसलमान होकर ऐसी बातें करते हो, इसका मुझे अफसोस है। इस्लाम ने हमेशा मजलूमों की मदद की है। और तुम मजलूमों की गर्दन पर छुरी फेर रहे हो।'

'जब सरकार हमारी परवरिस कर रही है, तो हम उनके बदखाह नहीं बन सकते।'

'अगर सरकार तुम्हारी जायदाद छीनकर किसी गैर को दे दे, तो तुम्हें बुरा लगेगा, या नहीं?'

'सरकार से लड़ना हमारे मजहब के खिलाफ है।'

'यह क्यों नहीं कहते तुममें गैरत नहीं है?'

'आप तो मुसलमान हैं। क्या आपका फर्ज नहीं है कि बादशाह की मदद करें?'

'अगर मुसलमान होने का यह मतलब है कि गरीबों का खून किया जाए, तो मैं काफिर हूं।'

तेगमुहम्मद पढ़ा-लिखा आदमी था। वह वाद-विवाद करने पर तैयार हो गया। सलीम ने उसकी हंसी उड़ाने की चेष्टा की। पंथों को वह संसार का कलंक समझता था, जिसने मनुष्य-जाति को विरोधी दलों में विभक्त करके एक-दूसरे का दुश्मन बना दिया है। तेगमुहम्मद रोजा-नमाज का पाबंद, दीनदार मुसलमान था। मजहब की तौहीन क्योंकि बर्दाश्त करता- उधर तो अहिराने में पुलिस और अहीरों में लाठियां चल रही थीं, इधर इन दोनों में हाथापाई की नौबत आ गई। कसाई पहलवान था। सलीम भी ठोकर चलाने और घूसेबाजी में मंजा हुआ, फुर्तीला, चुस्त। पहलवान साहब उसे अपनी पकड़ में लाकर दबोच बैठना चाहते थे। वह ठोकर-पर-ठोकर जमा रहा था। ताबड़-तोड़ ठोकरें पड़ीं तो पहलवान साहब गिर पड़े और लगे मात्भाषा में अपने मनोविकारों को प्रकट करने। उसके दोनों साथियों ने पहले दूर ही से तमाशा देखना उचित समझा था लेकिन जब तेगमुहम्मद गिर पड़ा, तो दोनों कमर कसकर पिल पड़े। यह दोनों

अभी जवान पड़े थे, तेजी और चुस्ती में सलीम के बराबर थे। सलीम पीछे हटता जाता था और यह दोनों उसे ठेलते जाते थे। उसी वक्त सलोनी लाठी टेकती हुई अपनी गाय खोजने आ रही थी। पुलिस उसे उसके द्वार से खोल लाई थी। यहां यह संग्राम छिड़ा देखकर उसने अंचल सिर से उतार कर कमर में बांधा और लाठी संभालकर पीछे से दोनों कसाइयों को पीटने लगी। उनमें से एक ने पीछे फिरकर बुढ़िया को इतने जोर से धक्का दिया कि वह तीन-चार हाथ पर जा गिरी। इतनी देर में सलीम ने घात पाकर सामने के जवान को ऐसा घूंसा दिया कि उसकी नाक से खून जारी हो गया और वह सिर पकड़कर बैठ गया। अब केवल एक आदमी और रह गया। उसने अपने दो योद्धाओं की यह गति देखी तो पुलिस वालों से फरियाद करने भागा। तेगमुहम्मद की दोनों घुटनियां बेकार हो गई थीं। उठ न सकता था। मैदान खाली देखकर सलीम ने लपककर मवेशियों की रस्सियां खोल दीं और तालियां बजा-बजाकर उन्हें भगा दिया। बेचारे जानवर सहमे खड़े थे। आने वाली विपत्ति का उन्हें कुछ आभास हो रहा था। रस्सी खुली तो सब पूंछ उठा-उठाकर भागे और हार की तरफ निकल गए।

उसी वक्त आत्मानन्द बदहवास दौड़े आए और बोले-आप जरा अपना रिवाल्वर तो मुझे दीजिए।

सलीम ने हक्का-बक्का होकर पूछा-क्या माजरा है, कुछ कहो तो-

'पुलिस वालों ने कई आदमियों को मार डाला। अब नहीं रहा जाता, मैं इस घोष को मजा चखा देना चाहता हूं।'

'आप कुछ भंग तो नहीं खा गए हैं- भला यह रिवाल्वर चलाने का मौका है?'

'अगर यों न दोगे, तो मैं छीन लूंगा। इस दुष्ट ने गोलियां चलवाकर चार-पांच आदमियों की जान ले ली। दस-बारह आदमी बुरी तरह जख्मी हो गए हैं। कुछ इनको भी तो मजा चखाना चाहिए। मरना तो है ही।'

'मेरा रिवाल्वर इस काम के लिए नहीं है।'

आत्मानन्द यों भी उद्वंड आदमी थे। इस हत्याकांड ने उन्हें बिल्कुल उन्मत्ता कर दिया था। बोले-निरपराधों का रक्त बहाकर आततायी चला जा रहा है, तुम कहते हो रिवाल्वर इस काम के लिए नहीं है फिर किस काम के लिए है- मैं तुम्हारे पैरों पड़ता हूं भैया, एक क्षण के लिए दे दो। दिल की लालसा पूरी कर लूं। कैसे-कैसे वीरों को मारा है इन हत्यारों ने कि देखकर मेरी आंखों में खून उतर आया।

सलीम बिना कुछ उत्तर दिए वेग से अहिराने की ओर चला गया। रास्ते में सभी द्वार बंद थे। कुत्ते भी कहीं भागकर जा छिपे थे।

एकाएक एक घर का द्वार झोंके के साथ खुला और एक युवती सिर खोले, अस्त-व्यस्त कपड़े खून से तर, भयातुर हिरनी-सी आकर उसके पैरों से चिपट गई और सहमी हुई आंखों से द्वार की ओर ताकती हुई बोली-मालिक, यह सब सिपाही मुझे मारे डालते हैं।

सलीम ने तसल्ली दी-घबराओ नहीं। घबराओ नहीं। माजरा क्या है-

युवती ने डरते-डरते बताया कि घर में कई सिपाही घुस गए हैं। इसके आगे वह और कुछ न कह सकी।

'घर में कोई आदमी नहीं है?'

'वह तो भैंस चराने गए हैं।'

'तुम्हारे कहां चोट आई है?'

'मुझे चोट नहीं आई। मैंने दो आदमियों को मारा है।'

उसी वक्त दो कांस्टेबल बंदूकें लिए घर से निकल आए और युवती को सलीम के पास खड़ी देख दौड़कर उसके केश पकड़ लिए और उसे द्वार की ओर खींचने लगे।

सलीम ने रास्ता रोककर कहा-छोड़ दो उसके बाल, वरना अच्छा न होगा। मैं तुम दोनों को भूनकर रख दूँ।

एक कांस्टेबल ने क्रोध-भरे स्वर में कहा-छोड़ कैसे दें- इसे ले जाएंगे साहब के पास। इसने हमारे दो आदमियों को गंडासे से जखमी कर दिया। दोनों तड़प रहे हैं।

'तुम इसके घर में क्यों गए थे?'

'गए थे मवेशियों को खोलने। यह गंडासा लेकर टूट पड़ी।'

युवती ने टोका-झूठ बोलते हो। तुमने मेरी बांह नहीं पकड़ी थी-

सलीम ने लाल आंखों से सिपाही को देखा और धक्का देकर कहा-इसके बाल छोड़ दो ।

'हम इसे साहब के पास ले जाएंगे।'

'तुम इसे नहीं ले जा सकते।'

सिपाहियों ने सलीम को हाकिम के रूप में देखा था। उसकी मातहती कर चुके थे। उस रोब का कुछ अंश उनके दिल पर बाकी था। उसके साथ जबर्दस्ती करने का साहस न हुआ। जाकर मि. घोष से फरियाद की। घोष बाबू सलीम से जलते थे। उनका खयाल था कि सलीम ही इस आंदोलन को चला रहा है और यदि उसे हटा दिया जाय, तो चाहे आंदोलन तुरंत शांत न हो जाय, पर उसकी जड़ टूट जाएगी, इसलिए सिपाहियों की रिपोर्ट सुनते ही तुरंत घोड़ा बढ़ाकर सलीम के पास आ पहुंचे और अंग्रेजी में कानून बघारने लगे। सलीम को भी अंग्रेजी बोलने का बहुत अच्छा अभ्यास था। दोनों में पहले कानूनी मुबाहसा हुआ, फिर धार्मिक तत्व निरूपण का नंबर आया, इसमें उतर कर दोनों दार्शनिक तर्क-वितर्क करने लगे, यहां तक कि अंत में व्यक्तिगत आक्षेपों की बौछार होने लगी। इसके एक ही क्षण बाद शब्द ने क्रिया का रूप धारण किया। मिस्टर घोष ने हंटर चलाया, जिसने सलीम के चेहरे पर एक नीली चौड़ी उभरी हुई रेखा छोड़ दी। आंखें बाल-बाल बच गईं। सलीम भी जामे से बाहर हो गया। घोष की टांग पकड़कर जोर से खींचा। साहब घोड़े से नीचे गिर पड़े। सलीम उनकी छाती पर चढ़ बैठा और नाक पर घूंसा मारा। घोष बाबू मूर्छित हो गए। सिपाहियों ने दूसरा घूंसा न पड़ने दिया। चार आदमियों ने दौड़कर सलीम को जकड़ लिया। चार आदमियों ने घोष को उठाया और होश में लाए।

अंधेरा हो गया था। आतंक ने सारे गांव को पिशाच की भांति छाप लिया था। लोग शोक से और आतंक के भाव से दबे, मरने वालों की लाशें उठा रहे थे। किसी के मुंह से रोने की आवाज न निकलती थी। जख्म ताजा था, इसलिए टीस न थी। रोना पराजय का लक्षण है, इन प्राणियों को विजय का गर्व था। रोककर अपनी दीनता प्रकट न करना चाहते थे। बच्चे भी जैसे रोना भूल गए थे।

मिस्टर घोष घोड़े पर सवार होकर डाक बंगले गए। सलीम एक सब-इंस्पेक्टर और कई कांस्टेबलों के साथ एक लारी

पर सदर भेज दिया गया। यह अहीरिन युवती भी उसी लारी पर भेजी गई थी। पहर रात जाते-जाते चारों अर्थियां गंगा की ओर चलीं। सलोनी लाठी टेकती हुई आगे-आगे गाती जाती थी-

सैंया मोरा रूठा जाय सखी री...

आठ

काले खां के आत्म-समर्पण ने अमरकान्त के जीवन को जैसे कोई आधार प्रदान कर दिया। अब तक उसके जीवन का कोई लक्ष्य न था, कोई आदर्श न था, कोई व्रत न था। इस मृत्यु ने उनकी आत्मा में प्रकाश-सा डाल दिया। काले खां की याद उसे एक क्षण के लिए भी न भूलती और किसी गुप्त शक्ति की भांति उसे शांति और बल देती थी। वह उसकी वसीयत इस तरह पूरी करना चाहता था कि काले खां की आत्मा को स्वर्ग में शांति मिले। घड़ी रात से उठकर कैदियों का हाल-चाल पूछना और उनके घरों पर पत्र लिखकर रोगियों के लिए दवा-दारु का प्रबंध करना, उनकी शिकायतें सुनना और अधिकारियों से मिलकर शिकायतों को दूर करना, यह सब उसके काम थे। और इन कामों को वह इतनी विनय, इतनी नम्रता और सहृदयता से करता कि अमलों को भी उस पर संदेह की जगह विश्वास होता था। वह कैदियों का भी विश्वासपात्र था और अधिकारियों का भी।

अब तक वह एक प्रकार से उपयोगितावाद का उपासक था। इसी सिध्दांत को मन में, यद्यपि अज्ञात रूप से, रखकर वह अपने कर्तव्य का निश्चय करता था। तत्त्व-चिंतन का उसके जीवन में कोई स्थान न था। प्रत्यक्ष के नीचे जो अथाह गहराई है, वह उसके लिए कोई महत्त्व न रखती थी। उसने समझ रखा था, वहां शून्य के सिवा और कुछ नहीं। काले खां की मृत्यु ने जैसे उसका हाथ पकड़कर बलपूर्वक उसे गहराई में डुबा दिया और उसमें डूबकर उसे अपना सारा जीवन किसी तृण के समान ऊपर तैरता हुआ दीख पड़ा, कभी लहरों के साथ आगे बढ़ता हुआ, कभी हवा के झोंकों से पीछे हटता हुआ कभी भंवर में पड़कर चक्कर खाता हुआ। उसमें स्थिरता न थी, संयम न था, इच्छा न थी। उसकी सेवा में भी दंभ था, प्रमाद था, द्वेष था। उसने दंभ में सुखदा की उपेक्षा की। उस विलासिनी के जीवन में जो सत्य था, उस तक पहुंचने का उद्योग न करके वह उसे त्याग बैठा। उद्योग करता भी क्या- तब उसे इस उद्योग का ज्ञान भी न था। प्रत्यक्ष ने उसी भीतर वाली आंखों पर परदा डालकर रखा था। प्रमाद में उसने सकीना से प्रेम का स्वांग किया। क्या उस उन्माद में लेशमात्र भी प्रेम की भावना थी- उस समय मालूम होता था, वह प्रेम में रत हो गया है, अपना सर्वस्व उस पर अर्पण किए देता है पर आज उस प्रेम में लिप्सा के सिवा और उसे कुछ न दिखाई देता था। लिप्सा ही न थी, नीचता भी थी। उसने उस सरल रमणी की हीनावस्था से अपनी लिप्सा शांत करनी चाही थी। फिर मुन्नी उसके जीवन में आई, निराशाओं से भग्न, कामनाओं से भरी हुई। उस देवी से उसने कितना कपट व्यवहार किया यह सत्य है कि उसके व्यवहार में कामुकता न थी। वह इसी विचार से अपने मन को समझा लिया करता था लेकिन अब आत्म-निरीक्षण करने पर स्पष्ट ज्ञात हो रहा था कि उस विनोद में भी, उस अनुराग में भी कामुकता का समावेश था। तो क्या वह वास्तव में कामुक है- इसका जो उत्तर उसने स्वयं अपने अंतःकरण से पाया, वह किसी तरह श्रेयस्कर न था। उसने सुखदा पर विलासिता का दोष लगाया पर वह स्वयं उससे कहीं कुत्सित, कहीं विषय-पूर्ण विलासिता में लिप्त था। उसके मन में प्रबल इच्छा हुई कि दोनों रमणियों के चरणों पर सिर रखकर रोए और कहे- देवियो, मैंने तुम्हारे साथ छल किया है, तुम्हें दगा दी है। मैं नीच हूं, अधम हूं, मुझे जो सजा चाहे दो, यह मस्तक तुम्हारे चरणों पर है।

पिता के प्रति भी अमरकान्त के मन में श्रद्धा का भाव उदय हुआ। जिसे उसने माया का दास और लोभ का कीड़ा

समझ लिया था, जिसे यह किसी प्रकार के त्याग के अयोग्य समझता था, वह आज देवत्व के उंचे सिंहासन पर बैठा हुआ था। प्रत्यक्ष के नशे में उसने किसी न्यायी, दयालु ईश्वर की सत्ता को कभी स्वीकार न किया था पर इन चमत्कारों को देखकर अब उसमें विश्वास और निष्ठा का जैसे एक सफर-सा उमड़ पड़ा था। उसे अपने छोटे-छोटे व्यवहारों में भी ईश्वरीय इच्छा का आभास होता था। जीवन में अब एक नया उत्साह था। नई जागृति थी। हर्षमय आशा से उसका रोम-रोम स्पंदित होने लगा। भविष्य अब उसके लिए अंधकारमय न था। दैवी इच्छा में अंधकार कहां ।

संध्या का समय था। अमरकान्त परेड में खड़ा था, उसने सलीम को आते देखा। सलीम के चरित्र में कायापलट हुआ था, उसकी उसे खबर मिल चुकी थी पर यहां तक नौबत पहुंच चुकी है, इसका उसे गुमान भी न था। वह दौड़कर सलीम के गले से लिपट गया। और बोला- तुम क्यूब आए दोस्त, अब मुझे यकीन आ गया कि ईश्वर हमारे साथ है। सुखदा भी तो यहीं है, जनाने जेल में। मुन्नी भी आ पहुंची। तुम्हारी कसर थी, वह भी पूरी हो गई। मैं दिल में समझ रहा था, तुम भी एक-न-एक दिन आओगे, पर इतनी जल्दी आओगे, यह उम्मीद न थी। वहां की ताजा खबरें सुनाओ। कोई हंगामा तो नहीं हुआ-

सलीम ने व्यंग्य से कहा-जी नहीं, जरा भी नहीं। हंगामे की कोई बात भी हो- लोग मजे से खा रहे हैं और गाग गा रहे हैं। आप यहां आराम से बैठे हुए हैं न-

उसने थोड़े-से शब्दों में वहां की सारी परिस्थिति कह सुनाई-मवेशियों का कुर्क किया जाना, कसाइयों का आना, अहीरों के मुहाल में गोलियों का चलना। घोष को पटककर मारने की कथा उसने विशेष रुचि से कही।

अमरकान्त का मुंह लटक गया-तुमने सरासर नादानी की।

'और आप क्या समझते थे, कोई पंचायत है, जहां शराब और हुक्के के साथ सारा फैसला हो जाएगा?'

'मगर फरियाद तो इस तरह नहीं की जाती?'

'हमने तो कोई रिआयत नहीं चाही थी।'

'रिआयत तो थी ही। जब तुमने एक शर्त पर जमीन ली, तो इंसाफ यह कहता है कि वह शर्त पूरी करो। पैदावार की शर्त पर किसानों ने जमीन नहीं जोती थी बल्कि सालाना लगान की शर्त पर। जमींदार या सरकार को पैदावार की कमी-बेशी से कोई सरोकार नहीं है।'

'जब पैदावार के महंगे हो जाने पर लगान बढ़ा दिया जाता है, तो कोई वजह नहीं कि पैदावार के सस्ते हो जाने पर घटा न दिया जाय। मंदी में तेजी का लगान वसूल करना सरासर बेइंसाफी है।'

'मगर लगान लाठी के जोर से तो नहीं बढ़ाया जाता, उसके लिए भी तो कानून है?'

सलीम को विस्मय हो रहा था, ऐसी भयानक परिस्थिति सुनकर भी अमर इतना शांत कैसे बैठा हुआ है- इसी दशा में उसने यह खबरें सुनी होतीं, तो शायद उसका खून खौल उठता और वह आपे से बाहर हो जाता। अवश्य ही अमर जेल में आकर दब गया है। ऐसी दशा में उसने उन तैयारियों को उससे छिपाना ही उचित समझा, जो आजकल दमन का मुकाबला करने के लिए की जा रही थीं।

अमर उसके जवाब की प्रतीक्षा कर रहा था। जब सलीम ने कोई जवाब न दिया, तो उसने पूछा-तो आजकल वहां

कौन है- स्वामीजी हैं-

सलीम ने सकुचाते हुए कहा-स्वामीजी तो शायद पकड़े गए। मेरे बाद ही वहां सकीना पहुंच गई।

'अच्छा सकीना भी परदे से निकल आई- मुझे तो उससे ऐसी उम्मीद न थी।'

'तो क्या तुमने समझा था कि आग लगाकर तुम उसे एक दायरे के अंदर रोक लोगे?'

अमर ने चिंतित होकर कहा-मैंने तो यही समझा था कि हमने हिंसा भाव को लगाम दे दी है और वह काबू से बाहर नहीं हो सकता।

'आप आजादी चाहते हैं मगर उसकी कीमत नहीं देना चाहते।'

'आपने जिस चीज को आजादी की कीमत समझ रखा है, वह उसकी कीमत नहीं है। उसकी कीमत है-हक और सच्चाई पर जमे रहने की ताकत।'

सलीम उत्तेजित हो गया-यह फिजूल की बात है। जिस चीज की बुनियाद सब्र पर है, उस पर हक और इंसाफ का कोई असर नहीं पड़ सकता।

अमर ने पूछा-क्या तुम इसे तस्लीम नहीं करते कि दुनिया का इंतजाम हक और इंसाफ पर कायम है और हरेक इंसान के दिल की गहराइयों के अंदर वह तार मौजूद है, जो कुरबानियों से झंकार उठता है-

सलीम ने कहा-नहीं, मैं इसे तस्लीम नहीं करता। दुनिया का इंतजाम खुदगर्जी और जोर पर कायम है और ऐसे बहुत कम इंसान हैं जिनके दिल की गहराइयों के अंदर वह तार मौजूद हो।

अमर ने मुस्कराकर कहा-तुम तो सरकार के खैरखाह नौकर थे। तुम जेल में कैसे आ गए-

सलीम हंसा-तुम्हारे इश्क में ।

'दादा को किसका इश्क था?'

'अपने बेटे का।'

'और सुखदा को?'

'अपने शौहर का।'

'और सकीना को- और मुन्नी को- और इन सैकड़ों आदमियों को, जो तरह-तरह की सख्तियां झेल रहे हैं?'

'अच्छा मान लिया कि कुछ लोगों के दिल की गहराइयों के अंदर यह तार है मगर ऐसे आदमी कितने हैं?'

'मैं कहता हूं ऐसा कोई आदमी नहीं जिसके अंदर हमदर्दी का तार न हो। हां, किसी पर जल्द असर होता है, किसी पर देर में और कुछ ऐसे गरज के बंदे भी हैं जिन पर शायद कभी न हो।'

सलीम ने हारकर कहा-तो आखिर का तुम चाहते क्या हो- लगान हम दे नहीं सकते। वह लोग कहते हैं हम लेकर छोड़ेंगे। तो क्या करें- अपना सब कुछ कुर्क हो जाने दें- अगर हम कुछ कहते हैं, तो हमारे ऊपर गोलियां चलती हैं। नहीं बोलते, तो तबाह हो जाते हैं। फिर दूसरा कौन-सा रास्ता है- हम जितना ही दबते जाते हैं, उतना ही वह लोग शेर होते हैं। मरने वाला बेशक दिलों में रहम पैदा कर सकता है लेकिन मारने वाला खौफ पैदा कर सकता है, जो रहम से

कहीं ज्यादा असर डालने वाली चीज है।

अमर ने इस प्रश्न पर महीनों विचार किया था। वह मानता था, संसार में पशुबल का प्रभुत्व है किंतु पशुबल को भी न्याय बल की शरण लेनी पड़ती है। आज बलवान-से-बलवान राष्ट्र में भी यह साहस नहीं है कि वह किसी निर्बल राष्ट्र पर खुल्लम-खुल्ला यह कहकर हमला करे कि 'हम तुम्हारे ऊपर राज करना चाहते हैं इसलिए तुम हमारे अधीन हो जाओ'। उसे अपने पक्ष को न्याय-संगत दिखाने के लिए कोई-न-कोई बहाना तलाश करना पड़ता है। बोला-अगर तुम्हारा खयाल है कि खून और कत्ल से किसी कौम की नजात हो सकती है, तो तुम सख्त गलती पर हो। मैं इसे नजात नहीं कहता कि एक जमाअत के हाथों से ताकत निकालकर दूसरे जमाअत के हाथों में आ जाय और वह भी तलवार के जोर से राज करे। मैं नजात उसे कहता हूँ कि इंसान में इंसानियत आ जाय और इंसानियत की सब्र बेइंसाफी और खुदगर्जी से दुश्मनी है।

सलीम को यह कथन तत्वहीन मालूम हुआ। मुंह बनाकर बोला-हुजूर को मालूम रहे कि दुनिया में फरिश्ते नहीं बसते, आदमी बसते हैं।

अमर ने शांत-शीतल हृदय से जवाब दिया-लेकिन क्या तुम देख नहीं रहे हो कि हमारी इंसानियत सदियों तक खून और कत्ल में डूबे रहने के बाद अब सच्चे रास्ते पर आ रही है- उसमें यह ताकत कहां से आई- उसमें खुद वह दैवी शक्ति मौजूद है। उसे कोई नष्ट नहीं कर सकता। बड़ी-से-बड़ी फौजी ताकत भी उसे कुचल नहीं सकती, जैसे सूखी जमीन में घास की जड़े। पड़ी रहती हैं और ऐसा मालूम होता है कि जमीन साफ हो गई, लेकिन पानी के छींटे पड़ते ही वह जड़ें पनप उठती हैं, हरियाली से सारा मैदान लहराने लगता है, उसी तरह इस कलों और हथियारों और खुदगर्जियों के जमाने में भी हममें वह दैवी शक्ति छिपी हुई अपना काम कर रही है। अब वह जमाना आ गया है, जब हक की आवाज तलवार की झंकार या तोप की गरज से भी ज्यादा कारगर होगी। बड़ी-बड़ी कौमें अपनी-अपनी फौजी और जहाजी ताकतें घटा रही हैं। क्या तुम्हें इससे आने वाले जमाने का कुछ अंदाज नहीं होता- हम इसलिए गुलाम हैं कि हमने खुद गुलामी की बेड़ियां अपने पैरों में डाल ली हैं। जानते हो कि यह बेड़ी क्या है- आपस का भेद। जब तक हम इस बेड़ी को काटकर प्रेम न करना सीखेंगे, सेवा में ईश्वर का रूप न देखेंगे, हम गुलामी में पड़े रहेंगे। मैं यह नहीं कहता कि जब तक भारत का हरेक व्यक्ति इतना बेदार न हो जाएगा, तब तक हमारी नजात न होगी। ऐसा तो शायद कभी न हो पर कम-से-कम उन लोगों के अंदर तो यह रोशनी आनी ही चाहिए, जो कौम के सिपाही बनते हैं। पर हममें कितने ऐसे हैं, जिन्होंने अपने दिल को प्रेम से रोशन किया हो- हममें अब भी वही ऊंच-नीच का भाव है, वही स्वार्थ-लिप्सा है, वही अहंकार है।

बाहर ठंड पड़ने लगी थी। दोनों मित्र अपनी-अपनी कोठरियों में गए। सलीम जवाब देने के लिए उतावला हो रहा था पर वार्डन ने जल्दी की और उन्हें उठना पड़ा।

दरवाजा बंद हो गया, तो अमरकान्त ने एक लंबी सांस ली और फरियादी आंखों से छत की तरफ देखा। उसके सिर कितनी बड़ी जिम्मेदारी है। उसके हाथ कितने बेगुनाहों के खून से रंगे हुए हैं कितने यतीम बच्चे और अबला विधावाएं उसका दामन पकड़कर खींच रही हैं। उसने क्यों इतनी जल्दबाजी से काम किया- क्या किसानों की फरियाद के लिए यही एक साधन रह गया था- और किसी तरह फरियाद की आवाज नहीं उठाई जा सकती थी- क्या यह इलाज बीमारी से ज्यादा असाध्य नहीं है- इन प्रश्नों ने अमरकान्त को पथभ्रष्ट-सा कर दिया। इस मानसिक संकट में काले खां की प्रतिमा उसके सम्मुख आ खड़ी हुई। उसे आभास हुआ कि वह उससे कह रही है-ईश्वर की शरण में जा। वहीं

तुझे प्रकाश मिलेगा।

अमरकान्त ने वहीं भूमि पर मस्तक रखकर शुद्ध अंतःकरण से अपने कर्तव्य की जिज्ञासा की-भगवन्, मैं अंधकार में पड़ा हुआ हूँ मुझे सीधा मार्ग दिखाइए।

और इस शांत, दीन प्रार्थना में उसको ऐसी शांति मिली, मानो उसके सामने कोई प्रकाश आ गया है और उसकी फैली हुई रोशनी में चिकना रास्ता साफ नजर आ रहा है।

नौ

पठानिन की गिरफ्तारी ने शहर में ऐसी हलचल मचा दी, जैसी किसी को आशा न थी। जीर्ण वृद्धावस्था में इस कठोर तपस्या ने मृतकों में भी जीवन डाल दिया, भीई और स्वार्थ-सेवियों को भी कर्मक्षेत्र में ला खड़ा किया। लेकिन ऐसे निर्लज्जों की अब भी कमी न थी, जो कहते थे-इसके लिए जीवन में अब क्या धारा है- मरना ही तो है। बाहर न मरी, जेल में मरी। हमें तो अभी बहुत दिन जीना है, बहुत कुछ करना है, हम आग में कैसे कूदें-

संध्या का समय है। मजदूर अपने-अपने काम छोड़कर, छोटे दूकानदार अपनी-अपनी दूकानें बंद करके घटना-स्थल की ओर भागे चले जा रहे हैं। पठानिन अब वहां नहीं है, जेल पहुंच गई होगी। हथियारबंद पुलिस का पहरा है, कोई जलसा नहीं हो सकता, कोई भाषण नहीं हो सकता, बहुत-से आदमियों का जमा होना भी खतरनाक है, पर इस समय कोई कुछ नहीं सोचता, किसी को कुछ दिखाई नहीं देता-सब किसी वेगमय प्रवाह में बहे जा रहे हैं। एक क्षण में सारा मैदान जन-समूह से भर गया।

सहसा लोगों ने देखा, एक आदमी ईंटों के एक ढेर पर खड़ा कुछ कह रहा है। चारों ओर से दौड़-दौड़कर लोग वहां जमा हो गए-जन-समूह का एक विराट् सफर उमड़ा हुआ था। यह आदमी कौन है- लाला समरकान्त जिनकी बहू जेल में है, जिनका लड़का जेल में है।

'अच्छा, यह लाला हैं भगवान् बुद्धि दे, तो इस तरह। पाप से जो कुछ कमाया, वह पुण्य में लुटा रहे हैं।'

'है बड़ा भागवान्।'

'भागवान् न होता, तो बुढ़ापे में इतना जस कैसे कमाता ।'

'सुनो, सुनो ।'

'वह दिन आएगा, जब इसी जगह गरीबों के घर बनेंगे और जहां हमारी माता गिरफ्तार हुई हैं, वहीं एक चौक बनेगा और उसके बीच में माता की प्रतिमा खड़ी की जाएगी। बोलो माता पठानिन की जय ।'

दस हजार गलों से 'माता की जय ।' की ध्वनि निकलती है, विकल, उत्ताप्त, गंभीर मानो गरीबों की हाय संसार में कोई आश्रय न पाकर आकाशवासियों से फरियाद कर रही है।

'सुनो, सुनो ।'

'माता ने अपने बालकों के लिए प्राणों का उत्सर्ग कर दिया। हमारे और आपके भी बालक हैं। हम और आप अपने बालकों के लिए क्या करना चाहते हैं, आज इसका निश्चय करना होगा।'

शोर मचता है-हड़ताल, हड़ताल ।

'हां, हड़ताल कीजिए मगर वह हड़ताल, एक या दो दिन की न होगी, वह उस वक्त तक रहेगी, जब तक हमारे नगर के विधाता हमारी आवाज न सुनेंगे। हम गरीब हैं, दीन हैं, दुखी हैं लेकिन बड़े आदमी अगर जरा शांतचित्त होकर ध्यान करेंगे, तो उन्हें मालूम हो जाएगा कि दीन-दुखी प्राणियों ही ने उन्हें बड़ा आदमी बना दिया है। ये बड़े-बड़े महल जान हथेली पर रखकर कौन बनाता है- इन कपड़े की मिलों में कौन काम करता है- प्रातः काल द्वार पर दूध और मक्खन लेकर कौन आवाज देता है- मिठाइयां और फल लेकर कौन बड़े आदमियों के नाश्ते के समय पहुंचता है- सफाई कौन करता है, कपड़े कौन धोता है- सबेरे अखबार और चिट्ठीयां लेकर कौन पहुंचता है- शहर के तीन-चौथाई आदमी एक-चौथाई के लिए अपना रक्त जला रहे हैं। इसका प्रसाद यही मिलता है कि उन्हें रहने के लिए स्थान नहीं एक बंगले के लिए कई बीघे जमीन चाहिए। हमारे बड़े आदमी साफ-सुथरी हवा और खुली हुई जगह चाहते हैं। उन्हें यह खबर नहीं है कि जहां असंख्य प्राणी दुर्गंधा और अंधकार में पड़े भंयकर रोगों से मर-मरकर रोग के कीड़े फैला रहे हों, वहां खुले हुए बंगले में रहकर भी वह सुरक्षित नहीं हैं यह किसकी जिम्मेदारी है कि शहर के छोटे-बड़े, अमीर-गरीब सभी आदमी स्वस्थ रह सकें- अगर म्युनिसिपैलिटी इस प्रधान कर्तव्य को नहीं पूरा कर सकती, तो उसे तोड़ देना चाहिए। रईसों और अमीरों की कोठियों के लिए, बगीचों के लिए, महलों के लिए, क्यों इतनी उदारता से जमीन दे दी जाती है- इसलिए कि हमारी म्युनिसिपैलिटी गरीबों की जान का कोई मूल्य नहीं समझती। उसे रुपये चाहिए, इसलिए कि बड़े-बड़े अधिकारियों को बड़ी-बड़ी तलब दी जाए। वह शहर को विशाल भवनों से अलंकृत कर देना चाहती है, उसे स्वर्ग की तरह सुंदर बना देना चाहती है पर जहां की अंधेरी दुर्गंधपूर्ण गलियों में जनता पड़ी कराह रही हो, वहां इन विशाल भवनों से क्या होगा- यह तो वही बात है कि कोई देह के कोढ़ को रेशमी वस्त्रों में छिपाकर इठलाता फिरे। सज्जनो अन्याय करना जितना बड़ा पाप है, उतना ही बड़ा अन्याय सहना भी है। आज निश्चय कर लो कि तुम यह दुर्दशा न सहोगे। यह महल और बंगले नगर की दुर्बल देह पर छाले हैं, मसवृद्धि हैं। इन मसवृद्धियों को काटकर फेंकना होगा। जिस जमीन पर हम खड़े हैं वहां कम-से-कम दो हजार छोटे-छोटे सुंदर घर बन सकते हैं, जिनमें कम-से-कम दस हजार प्राणी आराम से रह सकते हैं। मगर यह सारी जमीन चार-पांच बंगलों के लिए बेची जा रही है। म्युनिसिपैलिटी को दस लाख रुपये मिल रहे हैं। इसे वह कैसे छोड़े- शहर के दस हजार मजदूरों की जान दस लाख के बराबर भी नहीं।'

एकाएक पीछे के आदमियों ने शोर मचाया-पुलिस पुलिस आ गई।

कुछ लोग भागे, कुछ लोग सिमटकर और आगे बढ़ आए।

लाला समरकान्त बोले-भागो मत, भागे मत, पुलिस मुझे गिरफ्तार करेगी। मैं उसका अपराधी हूं और मैं ही क्यों, मेरा सारा घर उसका अपराधी है। मेरा लड़का जेल में है, मेरी बहू और पोता जेल में हैं। मेरे लिए अब जेल के सिवा और कहां ठिकाना है- मैं तो जाता हूं। (पुलिस से) वहीं ठहरिए साहब, मैं खुद आ रहा हूं। मैं तो जाता हूं, मगर यह कहे जाता हूं कि अगर लौटकर मैंने यहां गरीब भाइयों के घरों की पांतियां फूलों की भांति लहलहाती न देखी, तो यहीं मेरी चिता बनेगी।

लाला समरकान्त कूदकर ईंटों के टीले से नीचे आए और भीड़ को चीरते हुए जाकर पुलिस कप्तान के पास खड़े हो गए। लारी तैयार थी, कप्तान ने उन्हें लारी में बैठाया। लारी चल दी।

'लाला समरकान्त की जय!' की गहरी, हार्दिक वेदना से भरी हुई ध्वनि किसी बंधुए पशु की भांति तड़पती, छटपटाती ऊपर को उठी, मानो परवशता के बंधन को तोड़कर निकल जाना चाहती हो।

एक समूह लारी के पीछे दौड़ा अपने नेता को छुड़ाने के लिए नहीं, केवल श्रद्धा के आवेश में, मानो कोई प्रसाद, कोई आशीर्वाद पाने की सरल उमंग में। जब लारी गर्द में लुप्त हो गई, तो लोग लौट पड़े।

'यह कौन खड़ा बोल रहा है?'

'कोई औरत जान पड़ती है।'

'कोई भले घर की औरत है।'

'अरे यह तो वही हैं, लालाजी का समधि, रेणुकादेवी।'

'अच्छा जिन्होंने पाठशाले के नाम अपनी सारी जमा-जथा लिख दी।'

'सुनो सुनो!'

'प्यारे भाइयो, लाला समरकान्त जैसा योगी जिस सुख के लोभ से चलायमान हो गया, वह कोई बड़ा भारी सुख होगा फिर मैं तो औरत हूँ, और औरत लोभिन होती ही है। आपके शास्त्र-पुराण सब यही कहते हैं। फिर मैं उस लोभ को कैसे रोकूँ- मैं धनवान् की बहू, धनवान की स्त्री, भोग-विलास में लिप्त रहने वाली, भजन-भाव में मगन रहने वाली, मैं क्या जानूँ गरीबों को क्या कष्ट है, उन पर क्या बीतती है। लेकिन इस नगर ने मेरी लड़की छीन ली, मेरी जायदाद छीन ली, और अब मैं भी तुम लोगों ही की तरह गरीब हूँ। अब मुझे इस विश्वनाथ की पुरी में एक झोंपडा बनवाने की लालसा है। आपको छोड़कर मैं और किसके पास मांगने जाऊँ। यह नगर तुम्हारा है। इसकी एक-एक अंगुल जमीन तुम्हारी है। तुम्हीं इसके राजा हो। मगर सच्चे राजा की भांति तुम भी त्यागी हो। राजा हरिश्चन्द्र की भांति अपना सर्वस्व दूसरों को देकर, भिखारियों को अमीर बनाकर, तुम आज भिखारी हो गए हो। जानते हो वह छल से खोया हुआ राज्य तुमको कैसे मिलेगा- तुम डोम के हाथों बिक चुके। अब तुम्हें रोहितास और शैव्या को त्यागना पड़ेगा। तभी देवता तुम्हारे ऊपर प्रसन्न होंगे। मेरा मन कह रहा है कि देवताओं में तुम्हारा राज्य दिलाने की बातचीत हो रही है। आज नहीं तो कल तुम्हारा राज्य तुम्हारे अधिकार में आ जाएगा। उस वक्त मुझे भूल न जाना। मैं तुम्हारे दरबार में अपना प्रार्थना-पत्र पेश किए जा रही हूँ।'

सहसा पीछे से शोर मचा फिर पुलिस आ गई ।

'आने दो। उनका काम है अपराधियों को पकड़ना। हम अपराधी हैं। गिरफ्तार न कर लिए गए, तो आज नगर में डाका मारेंगे, चोरी करेंगे, या कोई षडयंत्र रचेंगे। मैं कहती हूँ, कोई संस्था जो जनता पर न्यायबल से नहीं, पशुबल से शासन करती है, वह लुटेरों की संस्था है। जो गरीबों का हक लूटकर खुद मालदार हो रहे हैं, दूसरों के अधिकार छीनकर अधिकारी बने हुए हैं, वास्तव में वही लुटेरे हैं। भाइयो, मैं तो जाती हूँ, मगर मेरा प्रार्थना-पत्र आपके सामने है। इस लुटेरी म्युनिसिपैलिटी को ऐसा सबक दो कि फिर उसे गरीबों को कुचलने का साहस न हो। जो तुम्हें रौंदे, उसके पांव में कांटे बनकर चुभ जाओ। कल से ऐसी हड़ताल करो कि धनियों और अधिकारियों को तुम्हारी शक्ति का अनुभव हो जाय, उन्हें विदित हो जाय कि तुम्हारे सहयोग के बिना वे न धन को भोग सकते हैं, न अधिकार को। उन्हें दिखा दो कि तुम्हीं उनके हाथ हो, तुम्हीं उनके पांव हो, तुम्हारे बगैर वे अपंग हैं।'

वह टीले से नीचे उतरकर पुलिस-कर्मचारियों की ओर चली तो सारा जन-समूह, हृदय में उमड़कर आंखों में रूक जाने वाले आंसुओं की भांति, उनकी ओर ताकता रह गया। बाहर निकलकर मर्यादा का उल्लंघन कैसे करें- वीरों के

आंसू बाहर निकलकर सूखते नहीं, वृक्षों के रस की भांति भीतर ही रहकर वृक्ष को पल्लवित और पुष्पित कर देते हैं। इतने बड़े समूह में एक कंठ से भी जयघोष नहीं निकला। क्रिया-शक्ति अंतर्मुखी हो गई थी मगर जब रेणुका मोटर में बैठ गई और मोटर चली, तो श्रद्धा की वह लहर मर्यादाओं को तोड़कर एक पतली गहरी, वेगमयी धारा में निकल पड़ी।

एक बूढ़े आदमी ने डांटकर कहा-जय-जय बहुत कर चुके। अब घर जाकर आटा-दाल जमा कर लो। कल से लंबी हड़ताल करनी है।

दूसरे आदमी ने समर्थन किया-और क्या यह नहीं कि यहां तो गला फाड़-फाड़ चिल्लाएं और सबेरा होते ही अपने-अपने काम पर चल दिए।

'अच्छा, यह कौन खड़ा हो गया?'

'वाह, इतना भी नहीं पहचानते- डॉक्टर साहब हैं।'

'डॉक्टर साहब भी आ गए- अब तो फतह है ।'

'कैसे-कैसे शरीफ आदमी हमारी तरफ से लड़ रहे हैं- पूछो, इन बेचारों को क्या लेना है, जो अपना सुख-चैन छोड़कर, अपने बराबरवालों से दुश्मनी मोल लेकर, जान हथेली पर लिए तैयार हैं।'

'हमारे ऊपर अल्लाह का रहम है। इन डॉक्टर साहब ने पिछले दिनों जब प्लेग का रोग फैला था, गरीबों की ऐसी खिदमत की कि वाह जिनके पास अपने भाई-बंद तक न खड़े होते थे, वहां बेधाड़क चले जाते थे और दवा-दारू, रुपया-पैसा, सब तरह की मदद तैयार हमारे हाफिजजी तो कहते थे, यह अल्लाह का फरिश्ता है।'

'सुनो, सुनो, बकवास करने को रात-भर पड़ी है।'

'भाइयो पिछली बार जब हड़ताल की थी, उसका क्या नतीजा हुआ- अगर वैसी ही हड़ताल हुई, तो उससे अपना ही नुकसान होगा। हममें से कुछ चुन लिए जाएंगे, बाकी आदमी मतभेद हो जाने के कारण आपस में लड़ते रहेंगे और असली उद्देश्य की किसी को सुधा न रहेगी। सरगनों के हटते ही पुरानी अदावतें निकाली जाने लगेंगी, गड़े मुरदे उखाड़े जाने लगेंगे न कोई संगठन रह जाएगा, न कोई जिम्मेदारी। सभी पर आतंक छा जाएगा, इसलिए अपने दिल को टटोलकर देख लो। अगर उसमें कच्चापन हो, तो हड़ताल का विचार दिल से निकाल डालो। ऐसी हड़ताल से दुर्गंध और गंदगी में मरते जाना कहीं अच्छा है। अगर तुम्हें विश्वास है कि तुम्हारा दिल भीतर से मजबूत है उसमें हानि सहने की, भूखों मरने की, कष्ट झेलने की सामर्थ्य है, तो हड़ताल करो। प्रतिज्ञा कर लो कि जब तक हड़ताल रहेगी, तुम अदावतें भूल जाओगे नफे-नुकसान की परवाह न करोगे। तुमने कबड्डी तो खेली ही होगी। कबड्डी में अक्सर ऐसा होता है कि एक तरफ से सब गुइयां मर जाते हैं केवल एक खिलाड़ी रह जाता है मगर वह एक खिलाड़ी भी उसी तरह कानून-कायदे से खेलता चला जाता है। उसे अंत तक आशा बनी रहती है कि वह अपने मरे गुइयों को जिला लेगा और सब-के-सब फिर पूरी शक्ति से बाजी जीतने का उद्योग करेंगे। हरेक खिलाड़ी का एक ही उद्देश्य होता है- पाला जीतना। इसके सिवा उस समय उसके मन में कोई भाव नहीं होता। किस गुइयां ने उसे कब गाली दी थी, कब उसका कनकौआ फाड़ डाला था, या कब उसको धूँसा मारकर भागा था, इसकी उसे जरा भी याद नहीं आती। उसी तरह इस समय तुम्हें अपना मन बनाना पड़ेगा। मैं यह दावा नहीं करता कि तुम्हारी जीत ही होगी। जीत भी हो सकती

है, हार भी हो सकती है। जीत या हार से हमें प्रयोजन नहीं। भूखा बालक भूख से विकल होकर रोता है। वह यह नहीं सोचता कि रोने से उसे भोजन मिल ही जाएगा। संभव है मां के पास पैसे न हों, या उसका जी अच्छा न हो लेकिन बालक का स्वभाव है कि भूख लगने पर रोए इसी तरह हम भी रो रहे हैं। हम रोते-रोते थककर सो जाएंगे, या माता वात्सल्य से विवश होकर हमें भोजन दे देगी, यह कौन जानता है- हमारा किसी से बैर नहीं, हम तो समाज के सेवक हैं, हम बैर करना क्या जानें!

उधर पुलिस कप्तान थानेदार को डांट रहा था-जल्द लारी मंगवाओ। तुम बोलता था, अब कोई आदमी नहीं है। अब यह कहां से निकल आया-

थानेदार ने मुंह लटकाकर कहा-हुजूर, यह डॉक्टर साहब तो आज पहली ही बार आए हैं। इनकी तरफ तो हमारा गुमान भी नहीं था। कहिए तो गिरफ्तार करके तांगे पर ले चलूं-

'तांगे पर सब आदमी तांगे को घेर लेगा हमें फायर करना पड़ेगा। जल्दी दौड़कर कोई टैक्सी लाओ।'

डॉक्टर शान्तिकुमार कह रहे थे :

'हमारा किसी से बैर नहीं है। जिस समाज में गरीबों के लिए स्थान नहीं, वह उस घर की तरह है जिसकी बुनियाद न हो कोई हल्का-सा धक्का भी उसे जमीन पर गिरा सकता है। मैं अपने धनवान् और विद्वान् और सामर्थ्यवान् भाइयों से पूछता हूं, क्या यही न्याय है कि एक भाई तो बंगले में रहे, दूसरे को झोंपड़े भी नसीब न हों- क्या तुम्हें अपने ही जैसे मनुष्यों को इस दुर्दशा में देखकर शर्म नहीं आती- तुम कहोगे, हमने बुद्धि-बल से धन कमाया है, क्यों न उसका भोग करें- इस बुद्धि का नाम स्वार्थ-बुद्धि है, और जब समाज का संचालन स्वार्थ-बुद्धि के हाथ में आ जाता है न्याय-बुद्धि गददी से उतार दी जाती है, तो समझ लो कि समाज में कोई विप्लव होने वाला है। गर्मी बढ़ जाती है, तो तुरंत ही आंधी आती है। मानवता हमेशा कुचली नहीं जा सकती। समता जीवन का तत्व है। यही एक दशा है, जो समाज को स्थिर रख सकती है। थोड़े-से धनवानों को हरगिज यह अधिकार नहीं है कि वे जनता की ईश्वरदत्ता वायु और प्रकाश का अपहरण करें। यह विशाल जनसमूह उसी अनधिकार, उसी अन्याय का रोषमय रुदन है। अगर धनवानों की आंखें अब भी नहीं खुलतीं, तो उन्हें पछताना पड़ेगा। यह जागृति का युग है। जागृति अन्याय को सहन नहीं कर सकती। जागे हुए आदमी के घर में चोर और डाकू की गति नहीं?'

इतने में टैक्सी आ गई। पुलिस कप्तान कई थानेदारों और कांस्टेबलों के साथ समूह की तरफ चला।

थानेदार ने पुकारकर कहा-डॉक्टर साहब, आपका भाषण तो समाप्त हो चुका होगा। अब चले आइए, हमें क्यों वहां आना पड़े-

शान्तिकुमार ने ईंट-मंच पर खड़े-खड़े कहा-मैं अपनी खुशी से तो गिरफ्तार होने न आऊंगा, आप जबरदस्ती गिरफ्तार कर सकते हैं। और फिर अपने भाषण का सिलसिला जारी कर दिया।

'हमारे धनवानों को किसका बल है- पुलिस का। हम पुलिस ही से पूछते हैं, अपने कांस्टेबल भाइयों से हमारा सवाल है, क्या तुम भी गरीब नहीं हो- क्या तुम और तुम्हारे बाल-बच्चे सड़े हुए, अंधेरे, दुर्गंधा और रोग से भरे हुए बिलों में नहीं रहते- लेकिन यह जमाने की खूबी है कि तुम अन्याय की रक्षा करने के लिए, अपने ही बाल-बच्चों का गला घोटने के लिए तैयार खड़े हो?'

कप्तान ने भीड़ के अंदर जाकर शान्तिकुमार का हाथ पकड़ लिया और उन्हें साथ लिए हुए लौटा। सहसा नैना सामने से आकर खड़ी हो गई।

शान्तिकुमार ने चौंककर पूछा-तुम किधर से नैना- सेठजी और देवीजी तो चल दिए, अब मेरी बारी है।

नैना मुस्कराकर बोली-और आपके बाद मेरी।

'नहीं, कहीं ऐसा अनर्थ न करना। सब कुछ तुम्हारे ही ऊपर है।'

नैना ने कुछ जवाब न दिया। कप्तान डॉक्टर को लिए हुए आगे बढ़ गया। उधर सभा में शोर मचा हुआ था। अब उनका क्या कर्तव्य है, इसका निश्चय वह लोग न कर पाते थे। उनकी दशा पिघली हुई धातु की-सी थी। उसे जिस तरफ चाहे मोड़ सकते हैं। कोई भी चलता हुआ आदमी उनका नेता बनकर उन्हें जिस तरफ चाहे ले जा सकता था-सबसे ज्यादा आसानी के साथ शांतिभंग की ओर। चित्त की उस दशा में, जो इन ताबड़तोड़ गिरफ्तारियों से शांतिपथ-विमुख हो रहा था, बहुत संभव था कि वे पुलिस पर जाकर पत्थर फेंकने लगते, या बाजार लूटने पर आमादा हो जाते। उसी वक्त नैना उनके सामने जाकर खड़ी हो गई। वह अपनी बग्गी पर सैर करने निकली थी। रास्ते में उसने लाला समरकान्त और रेणुकादेवी के पकड़े जाने की खबर सुनी। उसने तुरंत कोचवान को इस मैदान की ओर चलने को कहा, और दौड़ी चली आ रही थी। अब तक उसने अपने पति और ससुर की मर्यादा का पालन किया था। अपनी ओर से कोई ऐसा काम न करना चाहती थी कि ससुराल वालों का दिल दुखे, या उनके असंतोष का कारण हो। लेकिन यह खबर पाकर वह संयत न रह सकी। मनीराम जामे से बाहर हो जाएंगे, लाला धानीराम छाती पीटने लगेंगे, उसे गम नहीं। कोई उसे रोक ले, तो वह कदाचित् आत्म-हत्या कर बैठे। वह स्वभाव से ही लज्जाशील थी। घर के एकांत में बैठकर वह चाहे भूखों मर जाती, लेकिन बाहर निकलकर किसी से सवाल करना उसके लिए असाध्य था। रोज जलसे होते थे लेकिन उसे कभी कुछ भाषण करने का साहस नहीं हुआ। यह नहीं कि उसके पास विचारों का अभाव था, अथवा वह अपने विचारों को व्यक्त न कर सकती थी। नहीं, केवल इसलिए कि जनता के सामने खड़े होने में उसे संकोच होता था। या यों कहो कि भीतर की पुकार कभी इतनी प्रबल न हुई कि मोह और आलस्य के बंधनों को तोड़ देती। बाज ऐसे जानवर भी होते हैं, जिनमें एक विशेष आसन होता है। उन्हें आप मार डालिए। पर आगे कदम न उठाएंगे। लेकिन उस मार्मिक स्थान पर उंगली रखते ही उनमें एक नया उत्साह, एक नया जीवन चमक उठता है। लाला समरकान्त की गिरफ्तारी ने नैना के हृदय में उसी मर्मस्थल को स्पर्श कर लिया। वह जीवन में पहली बार जनता के सामने खड़ी हुई, निशंक, निश्चल, एक नई प्रतिभा, एक नई प्रांजलता से आभासित। पूर्णिमा के रजत प्रकाश में ईंटों के टीले पर खड़ी जब उसने अपने कोमल किंतु गहरे कंठ-स्वर से जनता को संबोधित किया, तो जैसे सारी प्रकृति निःस्तब्ध हो गई।

'सज्जनो, मैं लाला समरकान्त की बेटी और लाला धानीराम की बहू हूं। मेरा प्यारा भाई जेल में है, मेरी प्यारी भावज जेल में हैं, मेरा सोने-सा भतीजा जेल में है, मेरे पिताजी भी पहुंच गए।'

जनता की ओर से आवाज आई-रेणुकादेवी भी ।

'हां, रेणुकादेवी भी, जो मेरी माता के तुल्य थीं। लड़की के लिए वही मैका है, जहां उसके मां-बाप, भाई-भावज रहें। और लड़की को मैका जितना प्यारा होता है, उतनी ससुराल नहीं होती। सज्जनो, इस जमीन के कई टुकड़े मेरे ससुरजी ने खरीदे हैं। मुझे विश्वास है, मैं आग्रह करूं तो वह यहां अमीरों के बंगले न बनवाकर गरीबों के घर बनवा

देंगे, लेकिन हमारा उद्देश्य यह नहीं है। हमारी लड़ाई इस बात पर है कि जिस नगर में आधो से ज्यादा आबादी गंदे बिलों में मर रही हो, उसे कोई अधिकार नहीं है कि महलों और बंगलों के लिए जमीन बेचे। आपने देखा था, यहां कई हरे-भरे गांव थे। म्युनिसिपैलिटी ने नगर निर्माण-संघ बनाया। गांव के किसानों की जमीन कौड़ियों के दाम छीन ली गई, और आज वही जमीन अशर्फियों के दाम बिक रही है इसलिए कि बड़े आदमियों के बंगले बनें। हम अपने नगर के विधाताओं से पूछते हैं, क्या अमीरों ही के जान होती है- गरीबों के जान नहीं होती- अमीरों ही को तंदुरुस्त रहना चाहिए- गरीबों को तंदुरुस्ती की जरूरत नहीं- अब जनता इस तरह मरने को तैयार नहीं है। अगर मरना ही है, तो इस मैदान में खुले आकाश के नीचे, चन्द्रमा के शीतल प्रकाश में मरना बिलों में मरने से कहीं अच्छा है लेकिन पहले हमें नगर-विधाताओं से एक बार और पूछ लेना है कि वह अब भी हमारा निवेदन स्वीकार करेंगे, या नहीं- अब भी सिध्दांत को मानेंगे, या नहीं- अगर उन्हें घमंड हो कि वे हथियार के जोर से गरीबों को कुचलकर उनकी आवाज बंद कर सकते हैं, तो यह उनकी भूल है। गरीबों का रक्त जहां गिरता है, वहां हरेक बूंद की जगह एक-एक आदमी उत्पन्न हो जाता है। अगर इस वक्त नगर-विधाताओं ने गरीबों की आवाज सुन ली तो उन्हें संत का यश मिलेगा, क्योंकि गरीब बहुत दिनों तक गरीब नहीं रहेंगे और वह जमाना दूर नहीं, जब गरीबों के हाथ में शक्ति होगी। विप्लव के जंतु को छेड़-छेड़कर न जगाओ। उसे जितना ही छेड़ोगे, उतना ही झल्लाएगा और वह उठकर जम्हाई लेगा और जोर से दहाड़ेगा, तो फिर तुम्हें भागने की राह न मिलेगी। हमें बोर्ड के मेंबरों को यही चेतावनी देनी है। इस वक्त बहुत ही अच्छा अवसर है। सभी भाई म्युनिसिपैलिटी के दफ्तर चलें। अब देर न करें, मेंबर अपने-अपने घर चले जाएंगे। हड़ताल में उपद्रव का भय है, इसलिए हड़ताल उसी हालत में करनी चाहिए, जब और किसी तरह काम न निकल सके।'

नैना ने झंडा उठा लिया और म्युनिसिपैलिटी के दफ्तर की ओर चली। उसके पीछे बीस-पच्चीस हजार आदमियों का एक सफर-सा उमड़ा हुआ चला और यह दल मेलों की भीड़ की तरह अक्रंखलाल नहीं, फौज की कतारों की तरह 'क्रंखलाब' था। आठ-आठ आदमियों की असंख्य पंक्तियां गंभीर भाव से एक विचार, एक उद्देश्य, एक धारणा की आंतरिक शक्ति का अनुभव करती हुई चली जा रही थीं, और उनका तांता न टूटता था, मानो भूगर्भ से निकलती चली आती हों। सड़क के दोनों ओर छज्जों और छतों पर दर्शकों की भीड़ लगी हुई थी। सभी चकित थे। उगर्िाेह कितने आदमी हैं। अभी चले ही आ रहे हैं।

तब नैना ने यह गीत शुरू कर दिया, जो इस समय बच्चे-बच्चे की जबान पर था-

हम भी मानव तनधारी हैं...'

कई हजार गलों का संयुक्त, सजीव और व्यापक स्वर गफन में गूंज उठा-

हम भी मानव तनधारी हैं ।'

नैना ने उस पद की पूर्ति की-

क्यों हमको नीच समझते हो-'

कई हजार गलों ने साथ दिया-

क्यों हमको नीच समझते हो-'

नैना-क्यों अपने सच्चे दासों पर-

जनता-क्यों अपने सच्चे दासों पर-

नैना-इतना अन्याय बरतते हो ।

जनता-इतना अन्याय बरतते हो ।

उधर म्युनिसिपैलिटी बोर्ड में यही प्रश्न छिड़ा हुआ था।

हाफिज हलीम ने टेलीफोन का चोगा मेज पर रखते हुए कहा-डॉक्टर शान्तिकुमार भी गिरफ्तार हो गए।

मि. सेन ने निर्दयता से कहा-अब इस आंदोलन की जड़ कट गई। डॉक्टर साहब उसके प्राण थे।

पुं ओंकारनाथ ने चुटकी ली-उस ब्लाक पर अब बंगले न बनेंगे। शगुन कह रहे हैं।

सेन बाबू भी अपने लड़के के नाम से उस ब्लाक के एक भाग के खरीददार थे। जल उठे-अगर बोर्ड में अपने पास किए हुए प्रस्तावों पर स्थिर रहने की शक्ति नहीं है, तो उसे इस्तीफा देकर अलग हो जाना चाहिए।

मि. शफीक ने, जो यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर और डॉ. शान्तिकुमार के मित्र थे, सेन को आड़े हाथों लिया-बोर्ड के फैसले खुदा के फैसले नहीं हैं। उस वक्त बेशक बोर्ड ने उस ब्लाक को छोटे-छोटे प्लॉटों में नीलाम करने का फैसला किया था, लेकिन उसका नतीजा क्या हुआ- आप लोगों ने वहां जितना इमारती सामान जमा किया, उसका कहीं पता नहीं है। हजार आदमी से ज्यादा रोज रात को वहीं सोते हैं। मुझे यकीन है कि वहां काम करने के लिए मजदूर भी राजी न होगा। मैं बोर्ड को खबरदार किए देता हूं कि अगर अपनी पालिसी बदल न दी, तो शहर पर बहुत बड़ी आफत आ जाएगी। सेठ समरकान्त और शान्तिकुमार का शरीक होना बतला रहा है कि यह तहरीक बच्चों का खेल नहीं है। उसकी जड़ बहुत गहरी पहुंच गई है और उसे उखाड़ फेंकना अब करीब-करीब गैरमुमकिन है। बोर्ड को अपना फैसला रद्द करना पड़ेगा। चाहे अभी करे या सौ-पचास जनों की नजर लेकर करे। अब तक का तरजबा तो यही कह रहा है कि बोर्ड की सख्तियों का बिलकुल असर नहीं हुआ बल्कि उल्टा ही असर हुआ। अब जो हड़ताल होगी, वह इतनी खौफनाक होगी कि उसके खयाल से रोंगटे खड़े होते हैं। बोर्ड अपने सिर पर बहुत बड़ी जिम्मेदारी ले रहा है।

मि. हामिदअली कपड़े की मिल के मैनेजर थे। उनकी मिल घाटे पर चल रही थी। डरते थे, कहीं लंबी हड़ताल हो गई, तो बधिया ही बैठ जाएगी। थे तो बेहद मोटे मगर बेहद मेहनती। बोले-हक को तस्लीम करने में बोर्ड को क्यों इतना पसोपेश हो रहा है, यह मेरी समझ में नहीं आता। शायद इसलिए कि उसके गईर को झुकना पड़ेगा। लेकिन हक के सामने झुकना कमजोरी नहीं, मजबूती है। अगर आज इसी मसले पर बोर्ड का नया इंतखाब हो, तो मैं दावे से कह सकता हूं कि बोर्ड का यह रिजोल्यूशन हर्गैलत की तरह मिट जाएगा। बीस-पचीस हजार गरीब आदमियों की बेहतरी और भलाई के लिए अगर बोर्ड को दस-बारह लाख का नुकसान उठाना और दस-पांच मेंबरों की दिलशिकनी करनी पड़े तो उसे...

फिर टेलीफोन की घंटी बजी। हाफिज हलीम ने कान लगाकर सुना और बोले-पच्चीस हजार आदमियों की फौज हमारे ऊपर धावा करने आ रही है। लाला समरकान्त की साहबजादी और सेठ धानीराम साहब की बहू उसकी लीडर हैं। डी. एस. पी. ने हमारी राय पूछी है, और यह भी कहा है कि फायर किए बगैर जुलूस पीछे हटने वाला नहीं। मैं इस मुआमले में बोर्ड की राय जानना चाहता हूं। बेहतर है कि वोट ले लिए जायं, जाबते की पाबंदियों का मौका नहीं है, आप लोग हाथ उठाएं-गौर-

बारह हाथ उठे।

'अगेंस्ट?'

दस हाथ उठे। लाला धानीराम निउट'ल रहे।

'तो बोर्ड की राय है कि जुलूस को रोका जाय, चाहे फायर करना पड़े?'

सेन बोले-क्या अब भी कोई शक है-

फिर टेलीफोन की घंटी बजी। हाफिजजी ने कान लगाया। डी. एस. पी. कह रहा था- बड़ा गजब हो गया। अभी लाला मनीराम ने अपनी बीवी को गोली मार दी।

हाफिजजी ने पूछा-क्या बात हुई-

'अभी कुछ मालूम नहीं। शायद मिस्टर मनीराम गुस्से में भरे हुए जुलूस के सामने आए और अपनी बीवी को वहां से हट जाने को कहा। लेडी ने इंकार किया। इस पर कुछ कहा-सुनी हुई। मिस्टर मनीराम के हाथ में पिस्तौल थी। फौरन शूट कर दिया। अगर वह भाग न जायं, तो धाज्जियां उड़ जायं। जुलूस अपने लीडर की लाश उठाए फिर म्युनिसिपल बोर्ड की तरफ जा रहा है।'

हाफिजजी ने मंत्रों को यह खबर सुनाई, तो सारे बोर्ड में सनसनी दौड़ गई। मानो किसी जादू से सारी सभा पाषाण हो गई हो।

सहसा लाला धानीराम खड़े होकर भर्राई हुई आवाज में बोले-सज्जनो, जिस भवन को एक-एक कंकड़ जोड़-जोड़कर पचास साल से बना रहा था, वह आज एक क्षण में ढह गया, ऐसा ढह गया है कि उसकी नींव का पता नहीं। अच्छे-से-अच्छे मसाले दिए, अच्छे-से-अच्छे कारीगर लगाए, अच्छे-से-अच्छे नक्शे बनवाए, भवन तैयार हो गया था, केवल कलश बाकी था। उसी वक्त एक तूफान आता है और उस विशाल भवन को इस तरह उड़ा ले जाता है, मानो ब्रुस का ढेर हो। मालूम हुआ कि वह भवन केवल मेरे जीवन का एक स्वप्न था। सुनहरा स्वप्न कहिए, चाहे काला स्वप्न कहिए पर था स्वप्न ही। वह स्वप्न भंग हो गया-भंग हो गया।

यह कहते हुए वह द्वार की ओर चले।

हाफिज हलीम ने शोक के साथ कहा-सेठजी, मुझे और मैं उम्मीद करता हूं कि बोर्ड को आपसे कमाल की हमदर्दी है।

सेठजी ने पीछे फिरकर कहा-अगर बोर्ड को मेरे साथ हमदर्दी है, तो इसी वक्त मुझे यह अख्तियार दीजिए कि जाकर लोगों से कह दूं, बोर्ड ने तुम्हें वह जमीन दे दी, वरना यह आग कितने ही घरों को भस्म कर देगी, कितनों ही के स्वप्नों को भंग कर देगी।

बोर्ड के कई मंत्र बोले-चलिए, हम लोग भी आपके साथ चलते हैं।

बोर्ड के बीस सभासद उठ खड़े हुए। सेन ने देखा कि यहां कुल चार आदमी रहे जाते हैं तो वह भी उठ पड़े, और उनके साथ उनके तीनों मित्र भी उठे। अंत में हाफिज हलीम का नंबर आया।

जुलूस उधर से नैना की अर्थी लिए चला आ रहा है। एक शहर में इतने आदमी कहां से आ गए- मीलों लंबी घनी कतार है शांत, गंभीर, संगठित जो मर मिटना चाहती है। नैना के बलिदान ने उन्हें अजेय, अभे? बना दिया है।

उसी वक्त बोर्ड के पचीसों मेंबरों ने सामने आकर अर्थी पर फूल बरसाए और हाफिज सलीम ने आगे बढ़कर, ऊंचे स्वर में कहा-भाइयो आप म्युनिसिपैलिटी के मेंबरों के पास जा रहे हैं, मेंबर खुद आपका इस्तिफाल करने आए हैं। बोर्ड ने आज इत्तिफाक राय से पूरा प्लाट आप लोगों को देना मंजूर कर लिया। मैं इस पर बोर्ड को मुबारकबाद देता हूं, और आपको भी। आज बोर्ड ने तस्लीम कर लिया कि गरीब की सेहत, आराम और जरूरत को वह अमीरों के शौक, तकल्लुफ और हविस से ज्यादा लिहाज के काबिल समझता है। उसने तस्लीम कर लिया कि गरीबों का उस पर उससे कहीं ज्यादा हक है, जितना अमीरों का। हमने तस्लीम कर लिया कि बोर्ड रुपये की निस्बत रिआया की जान की ज्यादा कद्र करती है। उसने तस्लीम कर लिया कि शहर की जीनत बड़ी-बड़ी कोंठियों और बंगलों से नहीं, छोटे-छोटे आरामदेह मकानों से है, जिनमें मजदूर और थोड़ी आमदनी के लोग रह सकें। मैं खुद उन आदमियों में हूं जो इस वसूल की तस्लीम न करते थे। बोर्ड का बड़ा हिस्सा मेरे ही खयाल के आदमियों का था लेकिन आपकी कुरबानियों ने और आपके लीडरों की जांबाजियों ने बोर्ड पर फतह पाई और आज मैं उस फतह पर आपको मुबारकबाद देता हूं, और इस फतह का सेहरा उस देवी के सिर है, जिसका जनाजा आपके कंधो पर है। लाला समरकान्त मेरे पुराने रफीक हैं। उनका सपूत बेटा मेरे लड़के का दिली दोस्त है। अमरकान्त जैसा शरीफ नौजवान मेरी नजर से नहीं गुजरा। उसी की सोहबत का असर है कि आज मेरा लड़का सिविल सर्विस छोड़कर जेल में बैठा हुआ है। नैनादेवी के दिल में जो कशमकश हो रही थी, उसका अंदाजा हम और आप नहीं कर सकते। एक तरफ बाप और भाई और भावज जेल में कैद, दूसरी तरफ शौहर और ससुर मिलकियत और जायदाद की धुन में मस्त। लाला धानीराम मुझे मुआफ करेंगे। मैं उन पर फिकरा नहीं कसता। जिस हालत में वह गिरफ्तार थे, उसी हालत में हम, आप और सारी दुनिया गिरफ्तार है। उनके दिल पर इस वक्त एक ऐसे गम की चोट है, जिससे ज्यादा दिलशिकन कोई सदमा नहीं हो सकता। हमको, और मैं यकीन करता हूं, आपको भी उनसे कमाल की हमदर्दी है। हम सब उनके गम में शरीक हैं। नैनादेवी के दिल में मैका और ससुराल की यह लड़ाई शायद इस तहरीक के शुरू होते ही शुरू हुई और आज उसका यह हसरतनाक अंजाम हुआ। मुझे यकीन है कि उनकी इस पाक कुरबानी की यादगार हमारे शहर में उस वक्त तक कायम रहेगी, जब तक इसका वजूद कायम रहेगा मैं बुतपरस्त नहीं हूं, लेकिन सबसे पहले मैं तजवीज करूंगा कि उस प्लाट पर जो मोहल्ला आबाद हो, उसके बीचों-बीच इस देवी की यादगार नस्ब की जाय, ताकि आने वाली नसलें उसकी शानदार कुरबानी की याद ताजा करती रहें-

दोस्तो, मैं इस वक्त आपके सामने कोई तकरीर नहीं करता हूं। यह न तकरीर करने का मौका है, न सुनने का। रोशनी के साथ तारीकी है, जीत के साथ हार, और खुशी के साथ गम। तारीकी और रोशनी का मेल सुहानी सुबह होती है, और जीत और हार का मेल सुलह। यह खुशी और गम का मेल एक नए दौर की आवाज है और खुदा से हमारी दुआ है कि यह दौर हमेशा कायम रहे, हममें ऐसे ही हक पर जान देने वाली पाक ईहें पैदा होती रहें क्योंकि दुनिया ऐसी ही ईहों की हस्ती से कायम है। आपसे हमारी गुजारिश है कि इस जीत के बाद हारने वालों के साथ वही बर्ताव कीजिए, जो बहादुर दुश्मन के साथ किया जाना चाहिए। हमारी इस पाक सरजमीन में हारे हुए दुश्मनों को दोस्त समझा जाता था। लड़ाई खत्म होते ही हम रंजिश और गुस्से को दिल से निकाल डालते थे और दिल खोलकर दुश्मन से गले मिल जाते थे। आइए, हम और आप गले मिलकर उस देवी की देह को खुश करें, जो हमारी सच्ची रहनुमा, तारीकी में सुबह का पैगाम लाने वाली सुद्वी थी। खुदा हमें तौफीक दे कि इस सच्चे शहीद से हम हकपरस्ती और खिदमत का सबक हासिल करें।

हाफिजजी के चुप होते ही 'नैनादेवी की जय' की ऐसी श्रद्धा में डूबी हुई ध्वनि उठी कि आकाश तक हिल उठा। फिर हाफिज हलीम की भी जय-जयकार हुई और जुलूस गंगा की तरफ रवाना हो गया। बोर्ड के सभी मेंबर जुलूस के साथ थे। सिर्फ हाफिज म्युनिसिपैलिटी के दफ्तर में जा बैठे और पुलिस के अधिकारियों से कैदियों की रिहाई के लिए परामर्श करने लगे।

जिस संग्राम को छः महीने पहले एक देवी ने आरंभ किया था, उसे आज एक दूसरी देवी ने अपने प्राणों की बलि देकर अंत कर दिया।

दस

इधर सकीना जनाने जेल में पहुंची, उधर सुखदा, पठानिन और रेणुका की रिहाई का परवाना भी आ गया। उसके साथ ही नैना की हत्या का संवाद भी पहुंचा। सुखदा सिर झुकाए मूर्तिवत् बैठी रह गई, मानो अचेत हो गई हो। कितनी महंगी विजय थी।

रेणुका ने लंबी सांस लेकर कहा-दुनिया में ऐसे-ऐसे आदमी पड़े हुए हैं, जो स्वार्थ के लिए स्त्री की हत्या कर सकते हैं।

सुखदा आवेश में आकर बोली-नैना की उसने हत्या नहीं की अम्मां, यह विजय उस देवी के प्राणों का वरदान है।

पठानिन ने आंसू पोंछते हुए कहा-मुझे तो यही रोना आता है कि भैया को दुःख होगा। भाई-बहन में इतनी मोहब्बत मैंने नहीं देखी।

जेलर ने आकर सूचना दी-आप लोग तैयार हो जाएं। शाम की गाड़ी से सुखदा, रेणुका और पठानिन, इन महिलाओं को जाना है। देखिए हम लोगों से जो खता हुई हो, उसे मुआफ कीजिएगा।

किसी ने इसका जवाब न दिया, मानो किसी ने सुना ही नहीं। घर जाने में अब आनंद न था। विजय का आनंद भी इस शोक में डूब गया था।

सकीना ने सुखदा के कान में कहा-जाने के पहले बाबूजी से मिल लीजिएगा। यह खबर सुनकर न जाने दुश्मनों पर क्या गुजरे- मुझे डर लग रहा है।

बालक रेणुकान्त सामने सहन में कीचड़ से फिसलकर गिर गया था और पैरों से जमीन को इस शरारत की सजा दे रहा था। साथ-ही-साथ रोता भी जाता था। सकीना और सुखदा दोनों उसे उठाने दौड़ीं, और वृक्ष के नीचे खड़ी होकर उसे चुप कराने लगीं।

सकीना कल सुबह आई थी पर अब तक सुखदा और उसमें मामूली शिष्टाचार के सिवा और बात न हुई थी। सकीना उससे बातें करते झंपती थी कि कहीं वह गुप्त प्रसंग न उठ खड़ा हो। और सुखदा इस तरह उससे आंखें चुराती थी, मानो अभी उसकी तपस्या उस कलंक को धोने के लिए काफी नहीं हुई।

सकीना की सलाह में जो सहृदयता भरी हुई थी, उसने सुखदा को पराभूत कर दिया। बोली-हां, विचार तो है। तुम्हारा कोई संदेशा कहना है-

सकीना ने आंखों में आंसू भरकर कहा-मैं क्या संदेशा कहूंगी बहूजी- आप इतना ही कह दीजिएगा-नैनादेवी चली गई, पर जब तक सकीना जिंदा है, आप उसे नैना ही समझते रहिए।

सुखदा ने निर्दय मुस्कान के साथ कहा-उनका तो तुमसे दूसरा रिश्ता हो चुका है।

सकीना ने जैसे इस वार को काटा-तब उन्हें औरत की जरूरत थी, आज बहन की जरूरत है।

सुखदा तीव्र स्वर में बोली-मैं तो तब भी जिंदा थी।

सकीना ने देखा, जिस अवसर से वह कांपती रहती थी, वह सिर पर आ ही पहुंचा। अब उसे अपनी सफाई देने के सिवा और कोई मार्ग न था।

उसने पूछा-मैं कुछ कहूं, बुरा तो न मानिएगा-

'बिलकुल नहीं।'

'तो सुनिए-तब आपने उन्हें घर से निकाल दिया था। आप पूरब जाती थीं, वह पश्चिम जाते थे। अब आप और वह एक दिल हैं, एक जान हैं। जिन बातों की उनकी निगाह में सबसे ज्यादा कद्र थी, वह आपने सब पूरी कर दिखाई। वह जो आपको पा जाएं, तो आपके कदमों का बोसा ले लें।'

सुखदा को इस कथन में वही आनंद आया, जो एक कवि को दूसरे कवि की दाद पाकर आता है, उसके दिल में जो संशय था वह जैसे आप-ही-आप उसके हृदय से टपक पड़ा-यह तो तुम्हारा खयाल है सकीना उनके दिल में क्या है, यह कौन जानता है- मरदों पर विश्वास करना मैंने छोड़ दिया। अब वह चाहे मेरी कुछ इज्जत करने लगे-इज्जत तो तब भी कम न करते थे, लेकिन तुम्हें वह दिल से निकाल सकते हैं, इसमें मुझे शक है। तुम्हारी शादी मियां सलीम से हो जाएगी, लेकिन दिल में वह तुम्हारी उपासना करते रहेंगे।

सकीना की मुद्रा गंभीर हो गई। नहीं, वह भयभीत हो गई। जैसे कोई शत्रु उसे दम देकर उसके गले में फंदा डालने जा रहा हो। उसने मानो गले को बचाकर कहा-तुम उनके साथ फिर अन्याय कर रही हो बहनजी वह उन आदमियों में नहीं हैं, जो दुनिया के डर से कोई काम करे। उन्होंने खुद सलीम से मेरी खत-किताबत करवाई। मैं उनकी मंशा समझ गई। मुझे मालूम हो गया, तुमने अपने रूठे हुए देवता को मना लिया। मैं दिल में कांपी जा रही थी कि मुझ जैसी गंवारिन उन्हें कैसे खुश रख सकेगी। मेरी हालत उस कंगले की-सी हो रही थी जो खजाना पाकर बौखला गया हो कि अपनी झोंपड़ी में उसे कहां रखे, कैसे उसकी हिफाजत करे- उनकी यह मंशा समझकर मेरे दिल का बोझ हल्का हो गया। देवता तो पूजा करने की चीज है वह हमारे घर में आ जाय, तो उसे कहां बैठाएं, कहां सुलाएं, क्या खिलाएं- मंदिर में जाकर हम एक क्षण के लिए कितने दीनदार, कितने परहेजगार बन जाते हैं। हमारे घर में आकर यदि देवता हमारा असली रूप देखे, तो शायद हमसे नफरत करने लगे। सलीम को मैं संभाल सकती हूं। वह इसी दुनिया के आदमी हैं, और मैं उन्हें समझा सकती हूं।

उसी वक्त जनाने वार्ड के द्वार खुले और तीन कैदी अंदर दाखिल हुए। तीनों ने घुटनों तक जांघिए और आधी बांह के ऊंचे कुरते पहने हुए थे। एक के कंधो पर बांस की सीढ़ी थी, एक के सिर पर चूने का बोरा। तीसरा चूने की हांडियां, कूंची और बाल्टियां लिए हुए था। आज से जनाने जेल की पुताई होगी। सालाना सफाई और मरम्मत के दिन आ गए हैं।

सकीना ने कैदियों को देखते ही उछलकर कहा-वह तो जैसे बाबूजी हैं, डोल और रस्सी लिए हुए, तो सलीम सीढ़ी उठाए हुए हैं।

यह कहते हुए उसने बालक को गोद में उठा लिया और उसे भींच-भींचकर प्यार करती हुई द्वार की ओर लपकी। बार-बार उसका मुंह चूमती और कहती जाती थी-चलो, तुम्हारे बाबूजी आए हैं।

सुखदा भी आ रही थी, पर मंद गति से उसे रोना आ रहा था। आज इतने दिनों के बाद मुलाकात हुई तो इस दशा में। सहसा मुन्नी एक ओर से दौड़ती हुई आई और अमर के हाथ से डोल और रस्सी छीनती हुई बोली-अरे यह तुम्हारा क्या हाल है लाला, आधो भी नहीं रहे, चलो आराम से बैठो, मैं पानी खींच देती हूँ।

अमर ने डोल को मजबूती से पकड़कर कहा-नहीं-नहीं, तुमसे न बनेगा। छोड़ दो डोल। जेलर देखेगा, तो मेरे ऊपर डांट पड़ेगी।

मुन्नी ने डोल छीनकर कहा-मैं जेलर को जवाब दे लूंगी। ऐसे ही थे तुम वहां-

एक तरफ से सकीना और सुखदा दूसरी तरफ से पठानिन और रेणुका आ पहुंचीं पर किसी के मुंह से बात न निकलती थी। सबों की आंखें सजल थीं और गले भरे हुए। चली थीं हर्ष के आवेश में पर हर पग के साथ मानो जल गहरा होते-होते अंत को सिरों पर आ पहुंचा।

अमर इन देवियों को देखकर विस्मय-भरे गर्व से फूल उठा। उनके सामने वह कितना तुच्छ था, कितना नगण्य। किन शब्दों में उनकी स्तुति करे, उनकी भेंट क्या चढ़ाए- उसके आशावादी नेत्रों में भी राष्ट्र का भविष्य कभी इतना उज्ज्वल न था। उनके सिर से पांव तक स्वदेशाभिमान की एक बिजली-सी दौड़ गई। भक्ति के आंसू आंखों में छलक आए।

औरों की जेल-यात्रा का समाचार तो वह सुन चुका था पर रेणुका को वहां देखकर वह जैसे उन्मत्ता होकर उनके चरणों पर गिर पड़ा।

रेणुका ने उसके सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद देते हुए कहा-आज चलते-चलते तुमसे खूब भेंट हो गई बेटा ईश्वर तुम्हारी मनोकामना सफल करे। मुझे तो आए आज पांचवां दिन है, पर हमारी रिहाई का हुक्म आ गया। नैना ने हमें मुक्त कर दिया।

अमर ने धड़कते हुए हृदय से कहा-तो क्या वह भी यहां आई है- उसके घर वाले तो बहुत बिगड़े होंगे-

सभी देवियां रो पड़ीं। इस प्रश्न ने जैसे उनके हृदय को मसोस दिया। अमर ने चकित नेत्रों से हरेक के मुंह की ओर देखा। एक अनिष्ट शंका से उसकी सारी देह थरथरा उठी। इन चेहरों पर विजय की दीप्ति नहीं, शोक की छाया अंकित थी। अधीर होकर बोला-कहां है नैना, यहां क्यों नहीं आती- उसका जी अच्छा नहीं है क्या-

रेणुका ने हृदय को संभालकर कहा-नैना को आकर चौक में देखना बेटा, जहां उसकी मूर्ति स्थापित होगी। नैना आज तुम्हारे नगर की रानी है। हरेक हृदय में तुम उसे श्रद्धा के सिंहासन पर बैठी पाओगे।

अमर पर जैसे वज्रपात हो गया। वह वहीं भूमि पर बैठ गया और दोनों हाथों से मुंह ढांपकर ठुक-ठुटकर रोने लगा। उसे जान पड़ा, अब संसार में उसका रहना वृथा है। नैना स्वर्ग की विभूतियों से जगमगाती, मानो उसे खड़ी बुला रही थी।

रेणुका ने उसके सिर पर हाथ रखकर कहा-बेटा, क्यों उसके लिए रोते हो, वह मरी नहीं, अमर हो गई उसी के प्राणों से इस यज्ञ की पूर्णाहुति हुई है।

सलीम ने गला साफ करके पूछा-बात क्या हुई- क्या कोई गोली लग गई-

रेणुका ने इस भाव का तिरस्कार करके कहा-नहीं भैया, गोली क्या चलती, किसी से लड़ाई थी- जिस वक्त वह मैदान से जुलूस के साथ म्युनिसिपैलिटी के दफ्तर की ओर चली, तो एक लाख आदमी से कम न थे। उसी वक्त मनीराम ने आकर उस पर गोली चला दी। वहीं गिर पड़ी। कुछ मुंह से न कह पाई। रात-दिन भैया ही में उसके प्राण लगे रहते थे। वह तो स्वर्ग गई हां, हम लोगों को रोने के लिए छोड़ गई।

अमर को ज्यों-ज्यों नैना के जीवन की बातें याद आती थीं, उसके मन में जैसे विषाद का एक नया सोता खुल जाता था। हाय उस देवी के साथ उसने एक भीरु कर्तव्य का पालन न किया। यह सोच-सोचकर उसका जी कचोट उठता था। वह अगर घर छोड़कर न भागा होता, तो लालाजी क्यों उसे लोभी मनीराम के गले बंध देते और क्यों उसका यह करुणाजनक अंत होता ।

लेकिन सहसा इस शोक-सफर में डूबते हुए उसे ईश्वरीय विधन की नौका-सी मिल गई। ईश्वरीय प्रेरणा के बिना किसी में सेवा का ऐसा अनुराग कैसे आ सकता है- जीवन का इससे शुभ उपयोग और क्या हो सकता है- गृहस्थी के संचय में स्वार्थ की उपासना में, तो सारी दुनिया मरती है। परोपकार के लिए मरने का सौभाग्य तो संस्कार वालों ही को प्राप्त है। अमर की शोक-मग्न आत्मा ने अपने चारों ओर ईश्वरीय दया का चमत्कार देखा-व्यापक, असीम, अनंत।

सलीम ने फिर पूछा-बेचारे लालाजी को तो बड़ा रंज हुआ होगा-

रेणुका ने गर्व से कहा-वह तो पहले ही गिरफ्तार हो चुके थे बेटा, और शान्तिकुमार भी।

अमर को जान पड़ा, उसकी आंखों की ज्योति दुगुनी हो गई है, उसकी भुजाओं में चौगुना बल आ गया है, उसने वहीं ईश्वर के चरणों में सिर झुका दिया और अब उसकी आंखों से जो मोती गिरे, वह विषाद के नहीं, उल्लास और गर्व के थे। उसके हृदय में ईश्वर की ऐसी निष्ठा का उदय हुआ, मानो वह कुछ नहीं है, जो कुछ है, ईश्वर की इच्छा है जो कुछ करता है, वही करता है वही मंगल-मूल और सिधियों का दाता है। सकीना और मुन्नी दोनों उसके सामने खड़ी थीं। उनकी छवि को देखकर उसके मन में वासना की जो आंधी-सी चलने लगती थी, उसी छवि में आज उसने निर्मल प्रेम के दर्शन पाए, जो आत्मा के विकारों को शांत कर देता है, उसे सत्य के प्रकाश से भर देता है। उसमें लालासा की जगह उत्सर्ग, भोग की जगह तप का संस्कार भर देता है। उसे ऐसा आभास हुआ, मानो वह उपासक है और ये रमणियां उसकी उपास्य देवियां हैं। उनके पदरज को माथे पर लगाना ही मानो उसके जीवन की सार्थकता है।

रेणुका ने बालक को सकीना की गोद से लेकर अमर की ओर उठाते हुए कहा-यही तेरे बाबूजी हैं, बेटा, इनके पास जा।

बालक ने अमरकान्त का वह कैदियों का बाना देखा, तो चिल्लाकर रेणुका से चिपट गया फिर उसकी गोद में मुंह छिपाए कनखियों से उसे देखने लगा, मानो मेल तो करना चाहता है, पर भय तो यह है कि कहीं यह सिपाही उसे पकड़ न लें, क्योंकि इस भेस के आदमी को अपना बाबूजी समझने में उसके मन को संदेह हो रहा था।

सुखदा को बालक पर क्रोध आया। कितना डरपोक है, मानो इसे वह खा जाते। इच्छा हो रही थी कि यह भीड़ टल जाए, तो एकांत में अमर से मन की दो-चार बातें कर ले। फिर न जाने कब भेंट हो।

अमर ने सुखदा की ओर ताकते हुए कहा-आप लोग इस मैदान में भी हमसे बाजी ले गईं। आप लोगों ने जिस काम

का बीड़ा उठाया, उसे पूरा कर दिखाया। हम तो अभी जहां खड़े थे, वहीं खड़े हैं। सफलता के दर्शन होंगे भी या नहीं, कौन जाने- जो थोड़ा-बहुत आंदोलन यहां हुआ है, उसका गौरव भी मुन्नी बहन और सकीना बहन को है। इन दोनों बहनों के हृदय में देश के लिए जो अनुराग और कर्तव्य के लिए जो उत्सर्ग है, उसने हमारा मस्तक उंचा कर दिया। सुखदा ने जो कुछ किया, वह तो आप लोग मुझसे ज्यादा जानती हैं। आज लगभग तीन साल हुए, मैं विद्रोह करके घर से भागा था। मैं समझता था, इनके साथ मेरा जीवन नष्ट हो जाएगा पर आज मैं इनके चरणों की धूल माथे पर लगाकर अपने को धन्य समझूंगा। मैं सभी माताओं और बहनों के सामने उनसे क्षमा मांगता हूं।

सलीम ने मुस्कराकर कहा-यों जबानी नहीं, कान पकड़कर एक लाख मरतबा उठो-बैठो।

अमर ने कनखियों से देखा और बोला-अब तुम मैजिस्ट्रेट नहीं हो भाई, भूलो मत। ऐसी सजाएं अब नहीं दे सकते।

सलीम ने फिर शरारत की। सकीना से बोला-तुम चुपचाप क्यों खड़ी हो सकीना- तुम्हें भी तो इनसे कुछ कहना है, या मौका तलाश कर रही हो-

फिर अमर से बोला-आप अपने कौल से फिर नहीं सकते जनाब जो वादे किए हैं, वह पूरे करने पड़ेंगे।

सकीना का चेहरा मारे शर्म के लाल हो गया। जी चाहता था जाकर सलीम के चुटकी काट ले उसके मुख पर आनंद और विजय का ऐसा रंग था जो छिपाए न छिपता था। मानो उसके मुख पर बहुत दिनों से जो कालिमा लगी हुई थी, वह आज धुल गई हो, और संसार के सामने अपनी निष्कलकता का ढिंढोरा पीटना चाहती हो। उसने पठानिन को ऐसी आंखों से देखा, जो तिरस्कार भरे शब्दों में कह रही थीं-अब तुम्हें मालूम हुआ, तुमने कितना घोर अनर्थ किया था अपनी आंखों में वह कभी इतनी ऊंची न उठी थी। जीवन में उसे इतनी श्रद्धा और इतना सम्मान मिलेगा, इसकी तो उसने कभी कल्पना न की थी।

सुखदा के मुख पर भी कुछ कम गर्व और आनंद की झलक न थी। वहां जो कठोरता और गरिमा छाई रहती थी, उसकी जगह जैसे माधुर्य खिल उठा है। आज उसे कोई ऐसी विभूति मिल गई है, जिसकी कामना अप्रत्यक्ष होकर भी उसके जीवन में एक रक्ति, एक अपूर्णता की सूचना देती रहती थी। आज उस रक्ति में जैसे माधुर्य भर गया है, वह अपूर्णता जैसे पल्लवित हो गई है। आज उसने पुरुष के प्रेम में अपने नारीत्व को पाया है। उसके हृदय से लिपटकर अपने को खो देने के लिए आज उसके प्राण कितने व्याकुल हो रहे हैं। आज उसकी तपस्या मानो फलीभूत हो गई है।

रही मुन्नी, वह अलग विरक्त भाव से सिर झुकाए खड़ी थी। उसके जीवन की सूनी मुंडेर पर एक पक्षी न जाने कहां से उड़ता हुआ आकर बैठ गया था। उसे देखकर वह अंचल में दाना भरे आ आ कहती, पांव दबाती हुई उसे पकड़ लेने के लिए लपककर चली। उसने दाना जमीन पर बिखेर दिया। पक्षी ने दाना चुगा, उसे विश्वास भरी आंखों से देखा, मानो पूछ रहा हो-तुम मुझे स्नेह से पालोगी या चार दिन मन बहलाकर फिर पर काटकर निराधार छोड़ दोगी लेकिन उसने ज्योंही पक्षी को पकड़ने के लिए हाथ बढ़ाया, पक्षी उड़ गया और तब दूर की एक डाली पर बैठा हुआ उसे कपट भरी आंखों से देख रहा था, मानो कह रहा हो-मैं आकाशगामी हूं, तुम्हारे पिंजरे में मेरे लिए सूखे दाने और कुल्हिया में पानी के सिवा और क्या था।

सलीम ने नांद में चूना डाल दिया। सकीना और मुन्नी ने एक-एक डोल उठा लिया और पानी खींचने चलीं।

अमर ने कहा-बाल्टी मुझे दे दो, मैं भरे लाता हूं।

मुन्नी बोली-तुम पानी भरोगे और हम बैठे देखेंगे-

अमर ने हंसकर कहा-और क्या, तुम पानी भरोगी, और मैं तमाशा देखूंगा-

मुन्नी बाल्टी लेकर भागी। सकीना भी उसके पीछे दौड़ी।

रेणुका जमाई के लिए कुछ जलपान बना लाने चली गई थी। यहां जेल में बेचारे को रोटी-दाल के सिवा और क्या मिलता है। वह चाहती थी, सैकड़ों चीजें बनाकर विधिपूर्वक जमाई को खिलाएं। जेल में भी रेणुका को घर के सभी सुख प्राप्त थे। लेडी जेलर, चौकीदारिन और अन्य कर्मचारी सभी उनके गुलाम थे। पठानिन खड़ी-खड़ी थक जाने के कारण जाकर लेट रही थी। मुन्नी और सकीना पानी भरने चली गईं। सलीम को भी सकीना से बहुत-सी बातें कहनी थीं। वह भी बंबे की तरफ चला। यहां केवल अमर और सुखदा रह गए।

अमर ने सुखदा के समीप आकर बालक को गले लगाते हुए कहा-यह जेल तो मेरे लिए स्वर्ग हो गया सुखदा जितनी तपस्या की थी, उससे कहीं बढ़कर वरदान पाया। अगर हृदय दिखाना संभव होता, तो दिखाता कि मुझे तुम्हारी कितनी याद आती थी। बार-बार अपनी गलतियों पर पछताता था।

सुखदा ने बात काटी-अच्छा, अब तुमने बातें बनाने की कला भी सीख ली। तुम्हारे हृदय का हाल कुछ मुझे भी मालूम है। उसमें नीचे से ऊपर तक क्रोध-ही-क्रोध है। क्षमा या दया का कहीं नाम भी नहीं। मैं विलासिनी सही पर उस अपराध का इतना कठोर दंड यह जानते थे कि वह मेरा दोष नहीं मेरे संस्कारों का दोष था।

अमर ने लज्जित होकर कहा-यह तुम्हारा अन्याय है सुखदा ।

सुखदा ने उसकी ठोड़ी को ऊपर उठाते हुए कहा-मेरी ओर देखो। मेरा ही अन्याय है तुम न्याय के पुतले हो- ठीक है। तुमने सैकड़ों पत्र भेजे, मैंने एक का भी जवाब न दिया, क्यों- मैं कहती हूं, तुम्हें इतना क्रोध आया कैसे- आदमी को जानवरों से भी प्रीति हो जाती है। मैं तो फिर भी आदमी थी। रूठकर ऐसा भुला दिया मानो मैं मर गई।

अमर इस आक्षेप का कोई जवाब न दे सकने पर भी बोला-तुमने भी तो पत्र नहीं लिखा और मैं लिखता भी तो तुम जवाब देतीं- दिल से कहना।

'तो तुम मुझे सबक देना चाहते थे?'

अमरकान्त ने जल्दी से आक्षेप को दूर किया-नहीं, यह बात नहीं है सुखदा हजारों बार इच्छा हुई कि तुम्हें पत्र लिखूं, लेकिन-

सुखदा ने वाक्य को पूरा किया-लेकिन भय यही था कि शायद मैं तुम्हारे पत्रों को हाथ न लगाती। अगर नारी-हृदय का तुम्हें यही ज्ञान है, तो मैं कहूंगी, तुमने उसे बिल्कुल नहीं समझा।

अमर ने अपनी हार स्वीकार की-तो मैंने यह दावा कब किया था कि मैं नारी-हृदय का पारखी हूं-

वह यह दावा न करे लेकिन सुखदा ने तो धारणा कर ली थी कि उसे यह दावा है। मीठे तिरस्कार के स्वर में बोली-पुरुष की बहादुरी तो इसमें नहीं है कि स्त्री को अपने पैरों पर गिराए। मैंने अगर तुम्हें पत्र न लिखा, तो इसका यह कारण था कि मैं समझती थी, तुमने मेरे साथ अन्याय किया है, मेरा अपमान किया है लेकिन इन बातों को जाने दो। यह बताओ, जीत किसकी हुई, मेरी या तुम्हारी-

अमर ने कहा-मेरी।

'और मैं कहती हूँ-मेरी।'

'कैसे?'

'तुमने विद्रोह किया था, मैंने दमन से ठीक कर दिया।'

'नहीं, तुमने मेरी मांगें पूरी कर दीं।'

उसी वक्त सेठ धानीराम जेल के अधिकारियों और कर्मचारियों के साथ अंदर दाखिल हुए। लोग कौतूहल से उन लोगों की ओर देखने लगे। सेठ इतने दुर्बल हो गए थे कि बड़ी मुश्किल से लकड़ी के सहारे चल रहे थे। पग-पग पर खांसते भी जाते थे।

अमर ने आगे बढ़कर सेठजी को प्रणाम किया। उन्हें देखते ही उसके मन में उनकी ओर से जो गुबार था, वह जैसे धुल गया।

सेठजी ने उसे आशीर्वाद देकर कहा-मुझे यहां देखकर तुम्हें आश्चर्य हो रहा होगा बेटा, समझते होगे, बुढ़्ढा अभी तक जीता जा रहा है, इसे मौत क्यों नहीं आती- यह मेरा दुर्भाग्य है कि मुझे संसार ने सदा अविश्वास की आंखों से देखा। मैंने जो कुछ किया, उस पर स्वार्थ का आक्षेप लगा। मुझमें भी कुछ सच्चाई है, कुछ मनुष्यता है, इसे किसी ने कभी स्वीकार नहीं किया। संसार की आंखों में मैं कोरा पशु हूँ, इसलिए कि मैं समझता हूँ, हरेक काम का समय होता है। कच्चा फल पाल में डाल देने से पकता नहीं। तभी पकता है जब पकने के लायक हो जाता है। जब मैं अपने चारों ओर फैले हुए अंधकार को देखता हूँ, तो मुझे सूर्योदय के सिवाय उसके हटाने का कोई दूसरा उपाय नहीं सूझता। किसी दफ्तर में जाओ, बिना रिश्तों के काम नहीं चल सकता। किसी घर में जाओ, वहां द्वेष का राज्य देखोगे। स्वार्थ, अज्ञान, आलस्य ने हमें जकड़ रखा है। उसे ईश्वर की इच्छा ही दूर कर सकती है। हम अपनी पुरानी संस्कृति को भूल बैठे हैं। वह आत्म-प्रधान संस्कृति थी। जब तक ईश्वर की दया न होगी, उसका पुनर्विकास न होगा और जब तक उसका पुनर्विकास न होगा, हम लोग कुछ नहीं कर सकते। इस प्रकार के आंदोलनों में मेरा विश्वास नहीं है। इनसे प्रेम की जगह द्वेष बढ़ता है। जब तक रोग का ठीक निदान न होगा, उसकी ठीक औषधी न होगी, केवल बाहरी टीम-टाम से रोग का नाश न होगा।

अमर ने इस प्रलाप पर उपेक्षा-भाव से मुस्कराकर कहा-तो फिर हम लोग उस शुभ समय के इंतजार में हाथ-पर-हाथ धारे बैठे रहें-

एक वार्डन दौड़कर कई कुर्सियां लाया। सेठजी और जेल के दो अधिकारी बैठे। सेठजी ने पान निकालकर खाया, और इतनी देर में इस प्रश्न का जवाब भी सोचते जाते थे। तब प्रसन्न मुख होकर बोले-नहीं, यह मैं नहीं कहता। यह आलसियों और अकर्मण्यों का काम है। हमें प्रजा में जागृति और संस्कार उत्पन्न करने की चेष्टा करते रहना चाहिए। मैं इसे कभी नहीं मान सकता कि आज आधी मालगुजारी होते ही प्रजा सुख के शिखर पर पहुंच जाएगी। उसमें सामाजिक और मानसिक ऐसे कितने ही दोष हैं कि आधी तो क्या, पूरी मालगुजारी भी छोड़ दी जाय, तब भी उसकी दशा में कोई अंतर न होगा। फिर मैं यह भी स्वीकार न करूंगा कि फरियाद करने की जो विधि सोची गई और जिसका व्यवहार किया गया, उनके सिवा कोई दूसरी विधि न थी।

अमर ने उत्तोजित होकर कहा-हमने अंत तक हाथ-पांव जोड़े, आखिर मजबूर होकर हमें यह आंदोलन शुरू करना पड़ा।

लेकिन एक ही क्षण में वह नम्र होकर बोला-संभव है, हमसे गलती हुई हो, लेकिन उस वक्त हमें यही सूझ पड़ा।

सेठजी ने शांतिपूर्वक कहा-हां, गलती हुई और बहुत बड़ी गलती हुई। सैकड़ों घर बरबाद हो जाने के सिवा और कोई नतीजा न निकला। इस विषय पर गवर्नर साहब से मेरी बातचीत हुई है और वह भी यही कहते हैं कि ऐसे जटिल मुआमले में विचार से काम नहीं लिया गया। तुम तो जानते हो, उनसे मेरी कितनी बेतकलुफी है। नैना की मृत्यु पर उन्होंने मातमपुरसी का तार दिया था। तुम्हें शायद मालूम न हो, गवर्नर साहब ने खुद उस इलाके का दौरा किया और वहां के निवासियों से मिले। पहले तो कोई उनके पास आता ही न था। साहब बहुत हंस रहे थे कि ऐसी सूखी अकड़ कहीं नहीं देखी। देह पर साबित कपड़े नहीं लेकिन मिजाज यह है कि हमें किसी से कुछ नहीं कहना है। बड़ी मुश्किल से थोड़े-से आदमी जमा हुए। जज साहब ने उन्हें तसल्ली दी और कहा-तुम लोग डरो मत, हम तुम्हारे साथ अन्याय नहीं करना चाहते, तब बेचारे रोने लगे। साहब इस झगड़े को जल्द तय कर देना चाहते हैं। और इसलिए उनकी आज्ञा है कि सारे कैदी छोड़ दिए जाएं और एक कमेटी करके निश्चय कर लिया जाय कि हमें क्या करना है- उस कमेटी में तुम और तुम्हारे दोस्त मियां सलीम तो होंगे ही, तीन आदमियों को चुनने का तुम्हें और अधिकार होगा। सरकार की ओर से केवल दो आदमी होंगे। बस, मैं यही सूचना देने आया हूं। मुझे आशा है, तुम्हें इसमें कोई आपत्ति न होगी।

सकीना और मुन्नी में कनफुसकियां होने लगीं। सलीम के चेहरे पर रौनक आ गई, पर अमर उसी तरह शांत, विचारों में मग्न खड़ा रहा।

सलीम ने उत्सुकता से पूछा-हमें अख्तियार होगा जिसे चाहें चुनें-

'पूरा।'

'उस कमेटी का फैसला नातिक होगा?'

सेठजी ने हिचकिचाकर कहा-मेरा तो ऐसा खयाल है।

'हमें आपके खयाल की जरूरत नहीं। हमें इसकी तहरीर मिलनी चाहिए।'

'और तहरीर न मिले।'

'तो हमें मुआइदा मंजूर नहीं।'

'नतीजा यह होगा, कि यहीं पड़े रहोगे और रिआया तबाह होती रहेगी।'

'जो कुछ भी हो।'

'तुम्हें तो कोई खास तकलीफ नहीं है लेकिन गरीबों पर क्या बीत रही है, वह सोचो।'

'खूब सोच लिया है।'

'नहीं सोचा।'

'बिलकुल नहीं सोचा।'

'खूब अच्छी तरह सोच लिया है।'

'सोचते तो ऐसा न कहते।'

'सोचा है इसीलिए ऐसा कह रहा हूं।'

अमर ने कठोर स्वर में कहा-क्या कह रहे हो सलीम क्यों हुज्जत कर रहे हो- इससे फायदा-

सलीम ने तेज होकर कहा-मैं हुज्जत कर रहा हूं- वाह री आपकी समझ सेठजी मालदार हैं, हुक्कमरस हैं, इसलिए वह हुज्जत नहीं करते। मैं गरीब हूं, कैदी हूं इसलिए हुज्जत करता हूं-

'सेठजी बुजुर्ग हैं।'

'यह आज ही सुना कि हुज्जत करना बुजुर्गी की निशानी है।'

अमर अपनी हंसी को रोक न सका-यह शायरी नहीं है भाईजान, कि जो मुंह में आया बक गए। ऐसे मुआमले हैं, जिन पर लाखों आदमियों की जिंदगी बनती-बिगड़ती है। पूज्य सेठजी ने इस समस्या को सुलझाने में हमारी मदद की, जैसा उनका धर्म था और इसके लिए हमें उनका मशकूर होना चाहिए। हम इसके सिवा और क्या चाहते हैं कि गरीब किसानों के साथ इंसाफ किया जाय, और जब उस उद्देश्य को करने के इरादे से एक ऐसी कमेटी बनाई जा रही है, जिससे यह आशा नहीं कि जा सकती कि वह किसान के साथ अन्याय करे, तो हमारा धर्म है कि उसका स्वागत करें।

सेठजी ने मुग्ध होकर कहा-कितनी सुंदर विवेचना है। वाह लाट साहब ने खुद तुम्हारी तारीफ की।

जेल के द्वार पर मोटर का हार्न सुनाई दिया। जेलर ने कहा-लीजिए, देवियों के लिए मोटर आ गई। आइए, हम लोग चलें। देवियों को अपनी-अपनी तैयारियां करने दें। बहनो, मुझसे जो कुछ खता हुई हो, उसे मुआफ कीजिएगा। मेरी नीयत आपको तकलीफ देने की न थी हां, सरकारी नियमों से मजबूर था।

सब-के-सब एक ही लारी में जायें, यह तय हुआ। रेणुकादेवी का आग्रह था। महिलाएं अपनी तैयारियां करने लगीं। अमर और सलीम के कपड़े भी यहीं मंगवा लिए गए। आधो घंटे में सब-के-सब जेल से निकले।

सहसा एक दूसरी मोटर आ पहुंची और उस पर से लाला समरकान्त, हाफिज हलीम, डॉ. शान्तिकुमार और स्वामी आत्मानन्द उतर पड़े। अमर दौड़कर पिता के चरणों पर गिर पड़ा। पिता के प्रति आज उसके हृदय में असीम श्रद्धा थी। नैना मानो आंखों में आंसू भरे उससे कह रही थी-भैया, दादा को कभी दुःखी न करना, उनकी रीति-नीति तुम्हें बुरी भी लगे, तो भी मुंह मत खोलना। वह उनके चरणों को आंसुओं से धो रहा था और सेठजी उसके ऊपर मोतियों की वर्षा कर रहे थे।

सलीम भी पिता के गले से लिपट गया। हाफिजजी ने आशीर्वाद देकर कहा-खुदा का लाख-लाख शुक्र है कि तुम्हारी कुरबानियां सुफल हुईं। कहां है सकीना, उसे भी देखकर कलेजा ठंडा कर लूं।

सकीना सिर झुकाए आई और उन्हें सलाम करके खड़ी हो गई। हाफिजजी ने उसे एक नजर देखकर समरकान्त से कहा-सलीम का इंतिखाब तो बुरा नहीं मालूम होता।

समरकान्त मुस्कराकर बोले-सूरत के साथ दहेज में देवियों के जौहर भी हैं।

आनंद के अवसर पर हम अपने दुःखों को भूल जाते हैं। हाफिजजी को सलीम के सिविल सर्विस से अलग होने का,

समरकान्त को नैना की मृत्यु का और सेठ धानीराम को पुत्र-शोक का रंज कुछ कम न था, पर इस समय सभी प्रसन्न थे। किसी संग्राम में विजय पाने के बाद योद्धागण मरने वाले के नाम को रोने नहीं बैठते। उस वक्त तो सभी उत्सव मनाते हैं, शादियाने बजते हैं, महफिलें जमती हैं, बधाइयां दी जाती हैं। रोने के लिए हम एकांत ढूंढते हैं, हसने के लिए अनेकांत।

सब प्रसन्न थे। केवल अमरकान्त मन मारे हुए उदास था।

सब लोग स्टेशन पर पहुंचे, तो सुखदा ने उससे पूछा-तुम उदास क्यों हो-

अमर ने जैसे जाफकर कहा-मैं उदास तो नहीं हूं।

'उदासी भी कहीं छिपाने से छिपती है?'

अमर ने गंभीर स्वर में कहा-उदास नहीं हूं, केवल यह सोच रहा हूं कि मेरे हाथों इतनी जान-माल की क्षति अकारण ही हुई। जिस नीति से अब काम लिया गया, क्या उसी नीति से तब काम न लिया जा सकता था- उस जिम्मेदारी का भार मुझे दबाए डालता है।

सुखदा ने शांत-कोमल स्वर में कहा-मैं तो समझती हूं, जो कुछ हुआ, अच्छा ही हुआ। जो काम अच्छी नीयत से किया जाता है, वह ईश्वरार्थ होता है। नतीजा कुछ भी हो। यज्ञ का अगर कुछ फल न मिले तो यज्ञ का पुण्य तो मिलता ही है लेकिन मैं तो इस निर्णय को विजय समझती हूं, ऐसी विजय तो अभूतपूर्व है। हमें जो कुछ बलिदान करना पड़ा, वह उस जागृति के देखते हुए कुछ भी नहीं है, जो जनता में अंकुरित हो गई है। क्या तुम समझते हो, इन बलिदानों के बिना यह जागृति आ सकती थी, और क्या इस जागृति के बिना यह समझौता हो सकता था- मुझे इसमें ईश्वर का हाथ साफ नजर आ रहा है।

अमर ने श्रद्धा-भरी आंखों से सुखदा को देखा। उसे ऐसा जान पड़ा कि स्वयं ईश्वर इसके मन में बैठे बोल रहे हैं। वह क्षोभ और ग्लानि निष्ठा के रूप में प्रज्वलित हो उठी, जैसे कूड़े-करकट का ढेर आग की चिनगारी पड़ते ही तेज और प्रकाश की राशि बन जाता है। ऐसी प्रकाशमय शांति उसे कभी न मिली थी।

उसने प्रेम से-गद्गद कंठ से कहा-सुखदा, तुम वास्तव में मेरे जीवन का दीपक हो।

उसी वक्त लाला समरकान्त बालक को कंधों पर बिठाए हुए आकर बोले-अभी तो काशी ही चलने का विचार है न?

अमर ने कहा-मुझे तो अभी हरिद्वार जाना है।

सुखदा बोली-तो सब वहीं चलेंगे।

अमरकान्त ने कुछ हताश होकर कहा-अच्छी बात है। तो जरा मैं बाजार से सलोनी के लिए साड़ियां लेता आऊं-

सुखदा ने मुस्कराकर कहा-सलोनी के लिए ही क्यों- मुन्नी भी तो है।

मुन्नी इधर ही आ रही थी। अपना नाम सुनकर जिज्ञासा-भाव से बोली-क्या मुझे कुछ कहती हो बहूजी-

सुखदा ने उसकी गरदन में हाथ डालकर कहा-मैं कह रही थी कि अब मुन्नीदेवी भी हमारे साथ काशी रहेंगी।

मुन्नी ने चौंककर कहा-तो क्या तुम लोग काशी जा रहे हो-

सुखदा हंसी-और तुमने क्या समझा था-

'मैं तो अपने गांव जाऊंगी।'

'हमारे साथ न रहोगी?'

'तो क्या लाला भी काशी जा रहे हैं?'

'और क्या- तुम्हारी क्या इच्छा है?'

मुन्नी का मुंह लटक गया।

'कुछ नहीं, यों ही पूछती थी।'

अमर ने उसे आश्वासन दिया-नहीं मुन्नी, यह तुम्हें चिढ़ा रही हैं। हम सब हरिद्वार चल रहे हैं।

मुन्नी खिल उठी।

'तब तो बड़ा आनंद आएगा। सलोनी काकी मूसलों ढोल बजाएगी।'

अमर ने पूछा-अच्छा, तुम इस फैसले का मतलब समझ गई-

'समझी क्यों नहीं- पांच आदमियों की कमेटी बनेगी। वह जो कुछ करेगी उसे सरकार मान लेगी। तुम और सलीम दोनों कमेटी में रहोगे। इससे अच्छा और क्या होगा?'

'बाकी तीन आदमियों को भी हमीं चुनेंगे।'

'तब तो और भी अच्छा हुआ।'

'गवर्नर साहब की सज्जनता और सहृदयता है।'

'तो लोग उन्हें व्यर्थ बदनाम कर रहे थे?'

'बिल्कुल व्यर्थ।'

'इतने दिनों के बाद हम फिर अपने गांव में पहुंचेंगे। और लोग भी छूट आए होंगे?'

'आशा है। जो न आए होंगे, उनके लिए लिखा-पढ़ी करेंगे।'

'अच्छा, उन तीन आदमियों में कौन-कौन रहेगा?'

'और कोई रहे या न रहे, तुम अवश्य रहोगी।'

'देखती हो बहूजी, यह मुझे इसी तरह छेड़ा करते हैं।'

यह कहते-कहते उसने मुंह फेर लिया। आंखों में आंसू भर आए थे।